

* ॐ श्रीपरमात्मने नमः *

कल्याण

मूल्य १० रुपये



वर्ष
१४

गीताप्रेस, गोरखपुर

संख्या
३

अवधकी वीथियोंमें रामलला



COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with



By

Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!



KAPWING



भगवती मातंगी-देवी

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥



आख्यानकानि भुवि यानि कथाश्च या या यद्यत्प्रमेयमुचितं परिपेलवं वा ।
दृष्टान्तदृष्टिकथनेन तदेति साधो प्राकाशयमाशु भुवनं सितरश्मिनेव ॥

वर्ष
१४

गोरखपुर, सौर चैत्र, वि० सं० २०७६, श्रीकृष्ण-सं० ५२४५, मार्च २०२० ई०

संख्या
३

पूर्ण संख्या ११२०

श्रीमातंगी-ध्यान

ध्यायेयं रत्नपीठे शुककलपठितं शृण्वतीं श्यामलाङ्गीं
न्यस्तैकाङ्घ्रिं सरोजे शशिशकलधरां वल्लकीं वादयन्तीम् ।
कह्लाराबद्धमालां नियमितविलसच्चोलिकां रक्तवस्त्रां
मातङ्गीं शङ्खपात्रां मधुरमधुमदां चित्रकोद्भासिभालाम् ॥

(दुर्गासप्तशती अ०७)

मैं मातंगीदेवीका ध्यान करता हूँ। वे रत्नमय सिंहासनपर बैठकर पढ़ते हुए तोतेका मधुर शब्द सुन रही हैं। उनके शरीरका वर्ण श्याम है। वे अपना एक पैर कमलपर रखे हुए हैं और मस्तकपर अर्धचन्द्र धारण करती हैं तथा कह्लार पुष्पोंकी माला धारण किये वीणा बजाती हैं। उनके अंगमें कसी हुई चोली शोभा पा रही है। वे लाल रंगकी साड़ी पहने हाथमें शंखमय पात्र लिये हुए हैं। उनके वदनपर मधुका हलका-हलका प्रभाव जान पड़ता है और ललाटमें बेंदी शोभा दे रही है।

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

(संस्करण २,००,०००)

कल्याण, सौर चैत्र, वि० सं० २०७६, श्रीकृष्ण-सं० ५२४५, मार्च २०२० ई०

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या
१- श्रीमातंगी-ध्यान	३	१५- दृढ़ इच्छाशक्ति [बोध-कथा] (श्रीरामकिशोरजी)	२७
२- कल्याण	५	१६- असंग रहो और भगवान्‌को अपना मानो (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)	२८
३- परब्रह्म परमात्माकी बाल-क्रीड़ा [आवरणचित्र-परिचय]	६	१७- वर्तमान युगमें ज्योतिषका महत्त्व (पं० श्रीसंजय शिवशंकरजी दवे, ज्योतिषाचार्य)	२९
४- आत्मनिवेदन (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)	७	१८- विश्वेन्द्रोदय सम्प्रदायके जाम्भाणी साहित्यमें प्राप्त प्रेरक बोधकथाएँ (श्रीविनोद जम्भदासजी कड़वासरा)	३२
५- नाम-स्मरण (समर्थ सद्गुरु श्रीब्रह्मचैतन्यजी महाराज श्रीगोंदवलेकर)	९	१९- आचरण-शुद्धिमें बोधकथाओंकी भूमिका (श्रीसुरेन्द्रजी माहेश्वरी)	३५
६- 'जोड़ी कितनी चीजें!' [कविता] (श्रीशरदजी अग्रवाल)	१०	२०- संत-वचनामृत (वृन्दावनके गोलोकवासी सन्त पूज्य श्रीगणेशदासजी भक्तमालीके उपदेशपरक पत्रोंसे)	३७
७- भक्तके लक्षण (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) ...	११	२१- जीव-शिक्षा-सिद्धान्त [स्वामी श्रीहरिदासकृत अष्टादश पद] ..	३८
८- उत्तम पति प्राप्त करनेका साधनस्वरूप व्रत	१४	२२- प्यासी गौको जल पीनेसे रोकनेके कारण पुत्रहीनता	४१
९- दुर्गा-पाठ [शतसहस्रायुतलक्ष चण्डीप्रयोग] (पं० श्रीहनुमानजी शर्मा)	१५	२३- उदासीनाचार्य श्रीश्रीचन्द्रजी महाराज [संत-चरित] (स्वामी श्रीसर्वदानन्दजी महाराज, दर्शनरत्न)	४२
१०- भवितव्यता [बोध-कथा] (श्रीकन्हैयासिंहजी 'विशेन')	१८	२४- ब्रतोत्सव-पर्व [वैशाखमासके व्रत-पर्व]	४३
११- अहंकार कैसे मिटे? [साधकोंके प्रति] (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)	१९	२५- साधनोपयोगी पत्र	४४
१२- चार मित्र [बोध-कथा] (डॉ० श्रीमती पुष्पारानीजी गर्ग)	२२	२६- कृपानुभूति	४६
१३- 'लला फिर आइयो खेलन होरी' (श्रीअर्जुनलालजी बन्सल) ..	२३	२७- पढ़ो, समझो और करो	४७
१४- परिवारका स्वरूप (ब्रह्मचारी श्रीत्र्यम्बकेश्वरचैतन्यजी महाराज, अखिल भारतवर्षीय धर्मसंघ)	२५	२८- मनन करने योग्य	५०

चित्र-सूची

१- अवधकी वीथियोंमें रामलला	(रंगीन)	आवरण-पृष्ठ
२- भगवती मातंगी देवी	(")	मुख-पृष्ठ
३- अवधकी वीथियोंमें रामलला	(इकरंगा)	६
४- अरिष्टासुरका उद्धार	(")	५०

एकवर्षीय शुल्क

₹ २५०

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय । सत्-चित्-आनंद भूमा जय जय ॥
जय जय विश्वरूप हरि जय । जय हर अखिलात्मन् जय जय ॥
जय विराट् जय जगत्पते । गौरीपति जय रमापते ॥

विदेशमें Air Mail }
शुल्क }

वार्षिक US\$ 50 (₹ 3,000)
पंचवर्षीय US\$ 250 (₹ 15,000)

{ Us Cheque Collection
{ Charges 6\$ Extra

पंचवर्षीय शुल्क

₹ १२५०

संस्थापक—ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका

आदिसम्पादक—नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार

सम्पादक—राधेश्याम खेमका, सहसम्पादक—डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड़

केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित

website : gitapress.org

e-mail : kalyan@gitapress.org

☎ 09235400242 / 244

सदस्यता-शुल्क—व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस—२७३००५, गोरखपुर को भेजें।

Online सदस्यता हेतु gitapress.org पर Kalyan या Kalyan Subscription option पर click करें।

अब 'कल्याण' के मासिक अङ्क gitapress.org अथवा book.gitapress.org पर निःशुल्क पढ़ें।

इस प्रकारका आत्मसमर्पण सख्यभाव और दास्यभाववाले भी कर सकते हैं। अतः आत्मसमर्पण भक्तिका एक पृथक् अंग है। सख्य और दास्यभाववाले ऐसा कर भी सकते हैं और नहीं भी करें तो कोई आपत्ति नहीं। यदि कहा जाय कि मित्रता तभी पूरी होगी, जब आत्मसमर्पण कर दिया जायगा; सो ठीक है, परंतु मित्र तो इसके बिना भी हो सकता है। विभीषणके आत्मसमर्पणमें इतना महत्त्व नहीं प्रतीत होता। श्रीकृष्णको सखाभावसे आत्मसमर्पण तो गोपियोंने ही किया था। वे अपने ऊपर अपना कोई अधिकार नहीं समझती थीं। एकमात्र श्रीकृष्णका ही अधिकार मानती थीं। एक पुरुषमें नवधा भक्तिके सारे भेद भी रह सकते हैं और दो-चार अंग भी रह सकते हैं। भजन-ध्यान, सेवा-नमस्कार करते हुए आत्मसमर्पण नहीं भी हो सकता है। हाँ, और सब भक्तियाँ आ जानेपर भी यदि आत्मसमर्पण नहीं होता तो इतनी कमी ही है। जिसमें आत्मसमर्पण नहीं है, वह भी भक्त तो है और कहलाता भी भक्त ही है, परंतु आत्मसमर्पण कर देनेवाले भक्तकी तो महिमा ही अलग है। इसलिये नवधा भक्तिमें इस अंगको अन्तिम बतलाया गया है। यही सबसे ऊँचा भाव है।

नाम-स्मरण

(समर्थ सद्गुरु श्रीब्रह्मचैतन्यजी महाराज श्रीगोंदवलेकर)

नित्यनियम करनेका अर्थ

नित्यनियम करनेका अर्थ है निरन्तर नित्यमें रहना। हम मूलतः स्वयं नित्य हैं, फिर भी अनित्यमें रहते हैं। परमात्मा नित्य है, उसे भूलकर, विषय जो अनित्य है, उसमें व्यग्र हैं, अतः हमें परमात्माका विस्मरण होता है। जिसके कारण उसका स्मरण होगा, उसीको नित्यनियम कहते हैं। हमें हमेशा नित्यनियममें रहना चाहिये, किन्तु वैसा आचरण नहीं होता। इसलिये प्रतिदिन कुछ समयके लिये उसका स्मरण होनेके लिये पठन करना चाहिये, जो पठन किया होगा उसका चिन्तन करना चाहिये, जिससे हमें उसकी आदत होगी। जो अखण्ड नामस्मरण करता है, वह नित्यनियममें ही रहता है। यदि सच्चे अर्थसे किसीने नित्यनियम किया है तो ब्रह्मानन्द महाराज (ब्रह्मचैतन्य महाराजके सर्वश्रेष्ठ शिष्य) - ने ही। हमें सोचना चाहिये कि हम नित्यनियममें कैसे रह पायेंगे। इसके लिए गुरु-आज्ञा ही प्रमाण है। वही सच्चा साधन है। गुरु-आज्ञा ही नित्यनियम है। हमें उसकी शरणमें जाना चाहिये। प्रतिदिन थोड़ा पठन, तदनन्तर मनन, मननके पश्चात् आचरण और अन्तमें गुरुकी शरणमें जाना, यही साधकका साधनक्रम है और यही उसका नित्यनियम भी है।

आयु ज्यों-ज्यों बढ़ती है, त्यों-त्यों साधकको परमात्मासे मिलनेकी उत्कंठा बढ़नी चाहिये। केवल नित्यनियम है, इसलिये विवश होकर नामस्मरण नहीं करना चाहिये। साधकको हर बात दिलसे करनी चाहिये। यह ध्यानमें रखा जाय कि शंकित मनसे की हुई साधनामें अपवित्रता आ जाती है। परमार्थमें श्रद्धा ही मुख्य पूँजी है। ऐसी श्रद्धा हो कि साधनामें सन्तोष ही सर्वस्व है। जैसे थर्मामीटरमें हम बुखार कितना है, यह देख पाते हैं, वैसे साधना करते समय हमें सन्तोष कितना मिलता है, यह भी देखना चाहिये। साधकको विश्वमें कितने दोष हैं, यह नहीं देखना चाहिये; क्योंकि उन दोषोंके बीज हममें ही होते हैं। कीर्ति-लालसा, मान-सम्मान बहुत घातक

होते हैं। बड़े-बड़े साधकोंकी भी कीर्ति-लालसाके कारण अधोगति होती है। उसी प्रकार धन और कामवासनाका संयम न रखनेके कारण साधकोंका भी परमात्माके पास पहुँचते-पहुँचते पतन होने लगता है। विश्वके ये सारे बन्धन हमें बन्धनमें डालते हैं। भगवान्का पाश ही असली पाश है; वही पाश, वही बन्धन हमें सभी बन्धनोंसे मुक्त करता है और शाश्वत सुखका लाभ करा देता है।

जगमें प्राप्त होनेवाले मान-सम्मानसे कभी मोहित नहीं होना चाहिये। धन और कामवासनाकी अपेक्षा कीर्ति देहबुद्धिको अधिक मोहित करती है, वहाँ हमें बहुत सावधान रहना चाहिये। जहाँ मान-सम्मान, कीर्ति मिलना सम्भव है, वहाँ जाना टाल देना चाहिये। यदि उसे टालना सम्भव नहीं लगता हो तो 'भगवान्का दान है' ऐसा मानकर उसको स्वीकार करना चाहिये। जो वास्तवमें बड़ा होता है या श्रेष्ठ होता है, वह सम्मानकी कभी अपेक्षा नहीं करता और वह यदि सम्मानित किया गया तो उसकी उसे कभी महत्ता नहीं लगती। हमें स्वयं यह परखकर देखना चाहिये कि क्या हमें मान-सम्मान प्रिय लगता है? उससे हमें ज्ञात होगा कि हम स्वयं कितने श्रेष्ठ हैं? आते-जाते भगवान्को प्रणाम करे, राम-राम कहे। एक बार भगवान्के प्रति रुचि निर्माण हो गयी तो वह छूटेगी नहीं।

निरन्तर सन्तोषका मार्ग

उसकी माता धन्य है, जिसे लगातार रामसेवा करनेका अवसर मिला। स्वार्थरहित रामसेवा ही जीवनमें सबसे बड़ा लाभ है। मुखसे नामस्मरण, शरीरसे भगवत्-सेवा, चित्तमें भगवान्का ध्यान, मनकी समर्पित भावना—ये ही भगवत्-सेवा के साधन हैं, इसके अलावा अन्य कोई साधन नहीं है। जो-जो दिखायी देता है, वह नाशवान् है। यह तत्त्व समझकर सज्जन लोग जीवन व्यतीत करते हैं। सामान्य जनताको भी वैसा ही जीवन व्यतीत करना है। सन्तानको सँभालकर रखना चाहिये। गृहस्थीमें उदासी नहीं चाहिये। गृहस्थीमें

संसारमें मनुष्य चारों ओर ममताके बन्धनसे जकड़ा हुआ है। उसका एक-एक रोम ममत्वके धागेसे बँधा है। भगवान् कहते हैं—‘मनुष्य माता, पिता, भाई, पुत्र, स्त्री, शरीर, धन, मकान, सुहृद् और परिवार आदि सबमेंसे ममताके सत्रोंको अलग करके उनकी एक ही

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

मजबूत डोरी बट ले और उस डोरीके द्वारा अपने मनको मेरे चरणोंसे बाँध दे, तो वह सज्जन मेरे मन-मन्दिरमें उसी प्रकार निवास करता है, जिस प्रकार लोभीके मनमें धन।' यह ममताका बन्धन इसीलिये कच्चे धागेका बतलाया गया है कि इसके टूटते देर नहीं लगती। जहाँ कहीं स्वार्थमें बाधा आयी कि ममताका धागा टूटा। विषयजनित सारा प्रेम अपने लिये होता है न कि प्रेमास्पदके लिये। इसलिये यह टूटता भी बहुत शीघ्र है। परंतु जैसे धागोंकी बड़ी मजबूत रस्सी बट लेनेपर वह नहीं टूटती, इसी प्रकार जगत्की सारी ममता सब जगहसे बटोरकर एक भगवान्के चरणोंमें लगा दी जाय तो फिर उसके नष्ट होनेकी कोई सम्भावना नहीं। इसीलिये यह कहा गया है कि भगवान्के प्रति होनेवाला सच्चा प्रेम सदा बढ़ता ही रहता है कभी घटता नहीं।

संसारमें दुःखोंका एक प्रधान कारण ममता है। न मालूम कितने लोग प्रतिदिन मरते हैं और कितने लोगोंके धनका नित्य नाश होता है, पर हम किसीके लिये नहीं रोते; किंतु यदि हमारे घरका कोई आदमी मर जाय या अपना कुछ धन नष्ट हो जाय तो शोक होता है। इसका कारण ममता ही है। मान लीजिये, हमारा एक मकान है, यदि कोई आदमी उसकी एक ईंट निकाल देता है तो हमें बहुत बुरा मालूम होता है। हमने उस मकानको बेच दिया और उसकी कीमतका चेक ले लिया। अब उस मकानकी एक-एक ईंटसे सारी ममता निकलकर हमारी जेबमें रखे हुए कागजके टुकड़े चेकमें आ गयी। अब चाहे मकानमें आग लग जाय, हमें कोई चिन्ता नहीं। चिन्ता है उस कागजके चेककी। बैंकमें गये, चेकके रुपये हमारे खातेमें जमा हो गये। अब भले ही बैंकका लिपिक उस कागजके टुकड़ेको फाड़ डाले, हमें कोई चिन्ता नहीं। अब उस बैंककी चिन्ता है कि वह कहीं फेल न हो जाय; क्योंकि उसमें हमारे रुपये जमा हैं। इस प्रकार जहाँ ममता है, वहीं शोक है, यदि हमारी सारी ममता भगवान्‌में अर्पित हो जाय, फिर शोकका जरा-सा भी कारण न रहे। भक्त तो सर्वस्व अपने प्रभुके अर्पणकर उनको अपना बना लेता है और स्वयं उनका बन जाता है। उसमें कहीं टपड़ेके लिये ममता रहती ही नहीं

इसीलिये वह शोकरहित हुआ सर्वदा आनन्दमें मग्न रहता है।

४-भक्तमें अभिमान नहीं होता, वह तो सारे जगत्में अपने स्वामीको व्याप्त देखता है और अपनेको उनका सेवक समझता है। सेवकके लिये अभिमानको स्थान कहाँ? उसके द्वारा जो कुछ होता है, सो सब उसके भगवान्की शक्ति और प्रेरणासे होता है। ऐसा विनम्र भक्त सदा सावधानीसे इस बातको देखता रहता है कि कहीं मेरे किसी कार्यद्वारा या मेरी किसी चेष्टाद्वारा विश्वव्याप्त मेरे स्वामीका तिरस्कार न हो जाय। मेरे द्वारा सदा-सर्वदा उनकी आज्ञाका पालन होता रहे, मैं सदा उनकी रुचिके अनुकूल चलता रहूँ। वह अपनेको उस सूत्रधारके हाथकी कठपुतली समझता है, सूत्रधार जैसे नचाता है, पुतली वैसे ही नाचती है, वह इसमें अभिमान क्या करे? अथवा यों समझिये कि यह सारा संसार स्वामीका नाट्यमंच है, इसमें हम सभी लोग नट हैं, जिसको स्वामीने जो स्वाँग दिया है, उसीके अनुसार सांगोपांग अभिनय करना हमारा कर्तव्य है। जो आदमी मालिककी रुचिके अनुसार उसका काम नहीं करता, वह नमकहराम है और जो मालिककी सम्पत्तिको अपनी मान लेता है, वह बेईमान है। नट पार्ट करता है, स्टेजपर किसीके साथ पुत्रका-सा, किसीके साथ पिताका-सा, किसीके साथ मित्रका-सा यथायोग्य बर्ताव करता है, परंतु वस्तुतः किसी भी वस्तुको—अपनी पोशाकतकको भी वह अपनी नहीं समझता। इसी प्रकार भगवान्का भक्त उनकी नाट्यशालारूप इस दुनियामें उनके संकेतानुसार उन्हींके दिये हुए स्वाँगको लेकर आलस्यरहित हो उन्हींकी शक्तिसे कर्म किया करता है। इसमें वह अभिमान किस बातका करे? वह मालिकका विधान किया हुआ—बताया हुआ अभिनय करता है, न कि अपनी ओरसे कुछ। पार्ट करनेमें कभी चूकता नहीं; क्योंकि इसमें मालिकका खेल बिगड़ता है और अपना कुछ मानता नहीं; क्योंकि वह जानता है कि सब मालिकका है, मेरा कुछ भी नहीं, वह मालिकको ही सबका नियन्त्रण करनेवाला और सर्वत्र व्याप्त देखता है और अपनेको उनका अनुनय सेवक समझता है।

नहीं जवाहिर सोना चाँदी त्रिभुवनकी संपत्ति चाहतीं॥

भावैं ना दुनियाकी बातें दिलवरकी चरचा सहती।

‘ललितकिसोरी’ पार लगावैं मायाकी सरिता बहती ॥

भक्त तो केवल अपने प्रियतम स्वामीकी सेवामें ही रहना चाहता है, वह सेवाको छोड़कर मुक्ति भी नहीं ग्रहण करता। करे भी कैसे? भगवान्‌के उस अनन्य सेवकके लिये मायाका बन्धन तो है नहीं, जिससे वह मुक्त होना चाहे। अब तो केवल भगवत्-सेवाका बन्धन है, भक्त इस प्यारे बन्धनसे मुक्ति क्यों चाहेगा? श्रीमद्भागवतमें भगवान्‌ कहते हैं—

सालोक्यसार्ष्टिसामीप्यसारूप्यैकत्वमप्यत ।

दीयमानं न गृह्णन्ति विना मत्सेवनं जनाः ॥

मेरी सेवाको छोड़कर मेरे भक्त सालोक्य, सार्ष्टि, सामीप्य, सारूप्य और एकत्व मुक्तियोंको देनेपर भी नहीं लेते हैं।

भक्त जानता है, मेरे प्रभु समस्त ब्रह्माण्डोंके एकमात्र स्वामी हैं, मुक्ति उनके चरणोंकी दासी है। वह कहता है—

अब तो बंध-मोक्षकी इच्छा व्याकुल कभी न करती है।
मखड़ा ही नित नव बंधन है मुक्ति चरणसे झरती है॥

मुक्तिदायिनी गंगाजी श्रीभगवान्‌के चरणोंका ही तो जल हैं।

एक समय ब्रह्माजी भगवान्‌के द्वारपर पहुँचे। भगवान्‌ने द्वारपालके द्वारा उनसे पुछवाया कि ‘आप कौन-से ब्रह्मा हैं?’ ब्रह्माको इस बातपर बड़ा आश्चर्य हुआ, वे सोचने लगे—‘कहीं ब्रह्मा भी दस-बीस थोड़े ही हैं।’ उन्होंने कहा—‘जाओ, कह दो, चतुर्मुख ब्रह्मा आये हैं।’ भगवान्‌ने उनको भीतर बुलाया। ब्रह्माजीका कौतूहल शान्त नहीं हुआ। उन्होंने पूछा—‘भगवन्! आपने यह कैसे पूछा कि कौन-से ब्रह्मा हैं! क्या मेरे अतिरिक्त और भी कोई ब्रह्मा है?’ भगवान्‌ हँसे, उन्होंने विभिन्न ब्रह्माण्डोंके ब्रह्माओंका आवाहन किया। तत्काल वहाँ चारसे लेकर हजार मुँहतकके अनेकों ब्रह्मा आ पहुँचे। भगवान्‌ने कहा—‘देखो, ये सभी ब्रह्मा हैं। अपने-अपने ब्रह्माण्डके ब्रह्मा हैं।’ तब ब्रह्माजीका सन्देह दूर हुआ। ऐसे ब्रह्माओंके एकमात्र स्वामी, जिसके

रटत रटत रसना लटी, तृषा सूखि गये अंग।

‘तलसी’ चातक प्रेमको, नित नतन रुचि रंग ॥

बरषि परुष पाहन पयद, पंख करे टक टक।

‘तलसी’ परी न चाहिये चतुर चातकहिं चक ॥

यही दशा भक्तकी है।

फिर वह चाहे भी क्या? जगत्का सारा ऐश्वर्य जिसके ऐश्वर्यका एक कण भी नहीं है, वह सर्वलोकमहेश्वर श्यामसुन्दर उसका प्रियतम स्वामी है, उसकी सेवाको छोड़कर वह क्या चाहे? इसीलिये ललितकिशोरीजीने गाया है—

अष्टसिद्धि नवनिद्धि हमारी मूट्रुठीमें हरदम रहतीं।

श्रीविराट् श्रीमद्भगवद्गीता श्रीमद्भगवद्गीता श्रीमद्भगवद्गीता श्रीमद्भगवद्गीता श्रीमद्भगवद्गीता श्रीमद्भगवद्गीता श्रीमद्भगवद्गीता श्रीमद्भगवद्गीता श्रीमद्भगवद्गीता श्रीमद्भगवद्गीता

प्राणप्रिय हों, वह भक्त किस वस्तुकी कामना करे।

भक्त तो निष्कामभावसे नित्य-निरन्तर अति प्रेमके साथ उनका चिन्तन ही करता रहता है। तुलसीदासजीने कहा है—

कमिहि नारि पिआरि जिमि लोभिहि प्रिय जिमि दाम।

तिमि रघुनाथ निरन्तर प्रिय लागहु मोहि राम॥

भक्त निरन्तर अपने भगवान्‌के लिये कामी और लोभीकी इस दशाको प्राप्त रहता है। वह कैसे उनको भुलाये ? और कैसे दूसरे विषयके लिये कामना या लोभ करे ?

अतएव भक्त सदा-सर्वदा भगवान्‌के चिन्तनमें ही चित्तको लगाये रखता है। भगवान्‌ने भी गीतामें स्थान-स्थानपर नित्य-निरन्तर चिन्तन करनेकी आज्ञा दी है। आठवें अध्यायमें कहा है—

अन्तकाले च मामेव स्मरन् मुक्त्वा कलेवरम्।

यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ॥ ५ ॥

‘जो मनुष्य मृत्युके समय मुझको स्मरण करता हुआ शरीरको त्यागकर जाता है, वह मेरे साक्षात् स्वरूपको ही प्राप्त होता है, इसमें सन्देह नहीं है।’ इसपर लोग सोच सकते हैं कि फिर जीवनभर भगवान्‌का स्मरण करनेकी क्या आवश्यकता है। मरनेके समय भगवान्‌को याद कर लेंगे। याद करके मरनेपर भगवत्प्राप्तिका वचन भगवान्‌ने दे ही दिया है। इसी भ्रान्त धारणाको दूर करनेके लिये भगवान्‌ ने फिर कहा है—

यं यं वापि स्मरन् भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।

तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः ॥ ६ ॥

‘हे कुन्तीपुत्र अर्जुन! यह मनुष्य अन्तकालमें जिस-जिस भी भावका स्मरण करता हुआ शरीरका त्याग करता है, उस-उसको ही प्राप्त होता है; क्योंकि वह सदा उसी भावसे भावित रहा है।’

उत्तम पति प्राप्त करनेका साधनस्वरूप व्रत

एक बार स्वर्गकी अप्सराओंने देवर्षि नारदजीसे पूछा—‘देवर्षे! आप ब्रह्माजीके पुत्र हैं। हमें उत्तम पति पानेकी अभिलाषा है। भगवान्‌ नारायण हमारे प्राणपति हो सकें, इसके लिये आप हमलोगोंको कोई व्रत बतानेकी कृपा करें।’

नारदजीने कहा—प्रायः सबके लिये कल्याणदायक नियम यह है कि प्रश्न करनेके पूर्व प्रश्नकर्ता विनयपूर्वक प्रणाम करे, पर तुमलोगोंने इस नियमका पालन नहीं किया, क्योंकि तुम्हें युवावस्थाका गर्व है। फिर भी तुमलोग देवाधिदेव भगवान्‌ विष्णुके नामका कीर्तन करो और उनसे वर माँगो—‘प्रभो! आप हमारे स्वामी होनेकी कृपा करें।’ इससे तुम्हारा सम्पूर्ण मनोरथ सिद्ध होगा—इसमें कोई संशय नहीं है। साथ ही मैं एक व्रत भी बताता हूँ, जिसे करनेसे भगवान्‌ श्रीहरि स्वयं वर देनेके लिये उद्यत हो जाते हैं। चैत्र और वैशाखमासके शुक्लपक्षमें जो द्वादशी तिथि है, उस दिन यह व्रत करना चाहिये। रातमें विधिवत् भगवान्‌ श्रीविराट् की पूजा करे। उदितमान्‌ त्यागकरे। नादिके कृष्णवर्तमानमें उनके गति हुए। ब्रह्मराज्य।

कि भगवान्‌की प्रतिमाके ऊपर लाल फूलोंसे एक मण्डप बनवाये, नृत्य, गीत एवं वाद्यके साथ रातमें जागरण करे तथा ‘ॐ भवाय नमः’, ‘ॐ अनङ्गाय नमः’, ‘ॐ कामाय नमः’, ‘ॐ सुशास्त्राय नमः’, ‘ॐ मन्मथाय नमः’ तथा ‘ॐ हरये नमः’ कहकर क्रमशः भगवान्‌के सिर, कटि, भुजा, उदर एवं चरण आदिकी पूजा करे। फिर भगवान्‌को प्रणामकर रात्रि-जागरणकी विधि सम्पन्न करके प्रातःकाल भगवान्‌की वह प्रतिमा वेद-वेदांगके जानकार ब्राह्मणको दान कर दे।

अप्सराओ! इस प्रकार व्रत करनेपर इच्छानुकूल भगवान्‌ विष्णु अवश्य पतिरूपमें तुम्हें प्राप्त होंगे। इसके पश्चात्‌ ईश्वरके पवित्र रस तथा मल्लिका आदिके फूलोंसे उन देवेश्वरकी पूजा करना।

इस प्रकार कहकर देवर्षि नारदजी उसी क्षण वहाँसे चले गये। उन अप्सराओंने व्रतकी विधि सम्पन्न की। फलस्वरूप स्वयं भगवान्‌ श्रीहरि उनपर सन्तुष्ट होकर

दुर्गा-पाठ

[शतसहस्रायुतलक्ष चण्डीप्रयोग]

(पं० श्रीहनूमानजी शर्मा)

(१)

सुख-सन्तति और सौभाग्यकी वृद्धि एवं आपत्ति, विघ्न और देशोपद्रवादिकी निवृत्तिके निमित्तसे दुर्गाकी उपासना की जाती है और भगवत्कृपासे उसमें अभूतपूर्व या अद्वितीय सफलता मिलती है। महर्षि मार्कण्डेयजीने भगवतीको शीघ्रातिशीघ्र प्रसन्न करनेके अनुरोधसे अपने 'मार्कण्डेयपुराण' में 'सप्तशती' (स्तोत्र) नामसे दुर्गापाठका संयोजन किया है, जिसका एक-एक श्लोक ही नहीं; प्रत्येक श्लोकका एक-एक अक्षर भी मन्त्र है और उपासक यदि योग्य हो तो उसे आशातीत सफलता मिल सकती है। आपत्तिके अवसरोंमें ब्रह्मादि देवोंने, घननादादि दानवोंने और सुरथादि मानवोंने महामायाके प्रभावसे ही सर्वाभीष्ट प्राप्त किये थे। 'कलौ चण्डीविनायकौ' के अनुसार वर्तमान समयमें भी अमित संकट टालने, रिपुसुर और राजभयादि मिटाने, स्त्री-पुत्र या सौभाग्यादि प्राप्त करने और विजयश्री उपलब्ध होने आदिके अनेकों कार्य दुर्गापाठके द्वारा ही सफल होते हैं और दुर्गापाठी विद्वान् इसीको महामन्त्र या महौषधि अथवा तत्काल फलदायी महाशक्ति मानते हैं और प्रायः प्रत्येक प्रकारके प्रयोजनोंकी सिद्धिके लिये विशेषकर दुर्गापाठका ही प्रयोग करते हैं। यद्यपि दुर्गापाठकी प्रयोगविधि सामान्यरूपसे एक ही प्रकारकी है और उससे प्रायः सभी मनोरथ सिद्ध होते हैं तथापि प्रयोजनकी लघुता, महत्ता या कठिनता आदिके अनुसार प्रयोगकी शास्त्रोक्त-विधि भी अनेक प्रकारकी हो जाती है, अतः सर्वसाधारणके हित-निमित्त यहाँ उसका दिग्दर्शन कराया जाता है। यथा—

(२)

(१) देवीकी प्रसन्नता प्राप्त करनेके लिये तद्गतचित्त होकर यदि सामान्यरूपसे एक पाठ भी प्रतिदिन किया जाय और किसी प्रकारकी वाञ्छा (याञ्चा) या कामना न हो तो भी पाठकके सभी अभीष्ट सिद्ध होते रहते हैं और उसके प्रति भगवतीकी अविच्छिन्न कृपा उत्तरोत्तर बढ़ती रहती है। (२) प्रयोग यदि सकाम किया जाय

और उसमें भी प्रतिदिन केवल एक ही पाठ बन सके तो उसके लिये प्रातःस्नानादि नित्यकर्मसे निवृत्त होकर आसनस्थ सप्तशतीस्तोत्रका दुर्गाके रूपमें गन्धाक्षतादिसे पूजन करके (मनःसंकल्पकी पूर्तिके लिये) 'ॐ मार्कण्डेय उवाच' 'सावर्णिः सूर्यतनयो'से आरम्भ करके 'सावर्णिर्भविता मनुः ॐ' पर्यन्त समग्र पाठ करे और महामायाके सामने दोनों हाथ जोड़कर 'क्षमा-प्रार्थना' करे। इस प्रकार प्रतिदिन करता रहे। (३) यदि कार्य कुछ महत्त्वका हो और पाठ प्रतिदिन एक ही किया जाय तो उसमें सर्वप्रथम संकल्प करके 'पञ्चोपचार' (स्नान, गन्ध, पुष्प, धूप और नैवेद्य) से देवीकी सुवर्णमयी मूर्तिका या चित्रका पूजन करे। फिर रात्रिसूक्तका पाठ करके सप्तशतीका न्यास, ध्यान, नवार्णमन्त्रका न्यास, ध्यान और नवार्णमन्त्रके १०८ जप करे। तदनन्तर शान्तचित्त और एकाग्र मनसे देवीके माहात्म्यका मनमें मनन करता हुआ 'दुर्गापाठ' करे। (पाठ सादा हो या सम्पुटित—चाहे जैसा हो) शुद्ध, सुस्पष्ट और समानोच्चारणसे होना चाहिये 'गीता शीघ्री शिरःकम्पी' आदि न होना चाहिये। पाठके अनन्तर नवार्णके १०८ जप और करे, तत्पश्चात् उसका न्यास और जपोंका समर्पण करके देवीसूक्तका पाठ और क्षमा-याचना करे। (सप्तशतीका न्यास न करे। यदि पाठ ३ या ५ हो तो अन्तिम पाठके पीछे क्षमा-याचना करे।) यदि आवश्यक हो और अवसर मिले तो कवच और अर्गला आदिका पाठ विशेष कर दिया करे। (४) कदाचित् नवरात्रपर्यन्त पाठ करना अभीष्ट हो तो आरम्भमें गणपति-पूजनादि करनेके अनन्तर घटस्थापन, यववपन और देवीका पूजन करे और फिर उपर्युक्त प्रकारसे पाठ करे। और नवरात्र पूर्ण होनेपर तद्दशांश हवन, तद्दशांश तर्पण, तद्दशांश मार्जन और यथासामर्थ्य ९ ब्राह्मणोंको भोजन कराये। यदि कार्य कुछ अधिक महत्त्वका हो—रिपु, रोग, राजभय, अग्निदाह या चौरादिका भय हो—राष्ट्रभंग, महामारी, अतिवृष्टि, अनावृष्टि या अन्य किसी भी प्रकारकी संकटापन्न

दुर्गापाठके कामनायुक्त अनुष्ठानोंमें विशेषकर सम्पुटित पाठ किया करते हैं और शास्त्रकारोंने विभिन्न प्रकारकी कामनाओंके लिये सम्पुट भी पृथक्-पृथक् प्रकारके निश्चित कर दिये हैं, जो मुद्रित दुर्गापाठमें प्रयोग-विधिके रूपमें संयुक्त हैं। उनमें 'करोतु सा^१ नः' 'शरणागतदीनार्त'^२,

। सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

और ‘सर्वाबाधाविनिर्मुक्तो’^१ जैसे सम्पुट सात्त्विकी होनेपर भी आशार्थियोंके सर्वाभीष्ट सफल करनेमें सबल और व्यापक हैं। साथ ही ‘सर्वाबाधाप्रशमन’^२ जैसे मन्त्र उत्कट भी हैं, जिनसे महाबली अजेय शत्रु भी परास्त हो जाते हैं। विशेषता यह है कि उक्त मन्त्रके चतुर्थ चरणमें रोग या शत्रुके नामका योग करके विलोम पाठ किया जाय तो महीनोंके मनोरथ दिनोंमें ही सिद्ध हो जाते हैं। उत्कट इच्छा या परमानुरागसे किये जानेवाले अनुष्ठानोंमें आरम्भहीसे यह इच्छा प्रबल हो जाती है कि—‘अपने कार्यकी सिद्धि होगी या नहीं?’—‘अथवा किस रूपमें सफलता मिलेगी?’ इसका ज्ञान होनेके लिये सभी

शास्त्रकारोंने कई साधन बतलाये हैं, उनमें एक यह भी है कि ‘**दुर्गे देवि नमस्तुभ्यम्**^३’ इस मन्त्रके दस हजार जप करे और फिर जब कभी जिस-किसी कामनाके सिद्ध होने या न होनेका ज्ञान करनेकी कामना हो तो रात्रिके समय शुद्धासनपर उत्तराभिमुख बैठ करके एक हजार जप करे और मालाको मस्तकके नीचे रखकर वहीं सो जाय। ऐसा करनेसे निद्रा आनेपर सब कामोंको सिद्ध करनेवाली महाशक्ति स्वप्नमें देववाणी (संस्कृतके द्वारा) कुछ कहें तो उस कथनको तत्काल ही कागजपर अंकित कर लेना चाहिये और अपने अभीष्टकी सिद्धि या असिद्धिको जान लेना चाहिये।

बोध-कथा—

भवितव्यता

(श्रीकन्हैयासिंहजी 'बिसेन')

देवताओंकी महासभा आहूत की गयी थी। सभी लोग अपने-अपने वाहनोसे पधार रहे थे। वाहन सभाकक्षके बाहर अवस्थित थे। क्रमशः गरुड़, हंस, मयूर, उलूक और कपोत आदि आ चुके थे। इतनेमें यमराजका पदार्पण हुआ और वे अन्दर प्रवेश करने लगे। सहसा उनकी दृष्टि कपोतपर पड़ी और वे अन्दर आसनपर आसीन हो गये। एकाएक यमराजको देखकर कपोतको भयावह लगा और वह घबड़ाया हुआ बेचैन हो उठा। उसकी इस स्थितिको देखकर गरुड़ने पूछा—मित्र, तुम भयभीत लग रहे हो। अचानक इतने घबराये क्यों लग रहे हो ?

कपोतने कहा—यमराजको सामने उपस्थित देखकर मेरा कलेजा काँप रहा है। उनकी लाल-लाल आँखें मैं भूल नहीं पा रहा हूँ और मुझे लगता है कि मेरी मौत अभी और आज ही हो जायगी। इसी भयवश काँप रहा हूँ।

यह सुनकर गरुड़जी हँसे और कहा—तुम इसकी चिन्ता न करो, आओ मेरी पीठपर सवार हो जाओ और निमिषमात्रमें मैं तुम्हें साठ हजार योजन दूर मैनाक पर्वतकी चोटीपर पहुँचा दूँगा और किसीको पता भी नहीं चलेगा।

गरुड़जीने उसे पहुँचाकर पुनः अपना आसन ग्रहण कर लिया। सभाका समापन हुआ। सर्वप्रथम यमराजजी निकले और उनके नेत्र कपोतको खोजने लगे। इसे देखकर गरुड़जीने कहा—महाराज, क्या देख रहे हैं ? उन्होंने कहा—यहाँ कबूतर बैठा था, कहाँ गया ? दिखायी नहीं पड़ रहा है। इसपर गरुड़जीने कहा—महाराज, उसे तो मैं बहुत दूर पर्वतकी चोटीपर छोड़ आया हूँ। यमराजजीने हँसते हुए कहा—गरुड़जी! आपने तो मेरी चिन्ताको दूर कर दिया, जिसके लिये आप बधाईके पात्र हैं; क्योंकि कबूतरकी मृत्यु बहुत दूर पर्वत-शिखरपर नियत है। यह यहाँसे वहाँ तुरन्त कैसे पहुँचेगा ? क्या नियतिके विधि-विधान मिथ्या हो जायेंगे—यही मेरी चिन्ता थी। परन्तु आपने उसे नियत स्थानपर पहुँचाकर नियतिकी व्यवस्था और प्रकृतिके कार्योंमें सहयोग किया। इसके लिये मैं आपका आभारी हूँ।

कहा गया है—

तुलसी जसि भवतब्धता तैसी मिलइ सहाइ।

आपुन आवड़ ताहि पहिं ताहि तहाँ लै जाइ ॥

१. सर्वाबाधाविनिर्मुक्तो धनधान्यसुतान्विताः । मनुष्यो मत्प्रसादेन भविष्यति न संशयः ॥

२. सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि । एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम् ॥

3. दुर्गा देवि नमस्तुभ्यै सर्वकामार्थसाधिके । मम सिद्धिर्नासिद्धिर्वा स्वर्गः सर्वं प्रदशय ॥

(गीता १३।१)

मनुष्य मानता है कि जब शरीर मर जाता है, तब शरीरका वियोग होता है; इसलिये जन्मसे मृत्युतक हमारा रहा। यह बहुत स्थूल बुद्धिसे मान्यता है। बारीकीसे देखा जाय तो शरीर जो सौ वर्षतक रहनेवाला है, वह एक वर्षका बालक हो गया तो अब ९९ वर्ष ही रहनेवाला रहा। दृष्टि होती है कि बालक बढ़ रहा है, यह बात बिलकुल गलत है। बालक तो प्रतिक्षण मर रहा है। अपने भी सोचते हैं कि हम बढ़ रहे हैं, हम जी रहे हैं। यह बिलकुल झूठी बात है। सच्ची बात तो यह है कि हम मर रहे हैं, प्रतिक्षण मर रहे हैं! हम मानते

शरीर मेरा नहीं है, शरीर मैं नहीं हूँ, फिर आपके लिये शरीर कैसे हुआ? आप तो शरीर-मन-बुद्धिसे सदैव अलग ही हैं। अपने लिये मानते रहनेसे सम्बन्ध जुड़ता है। परमात्माका हम चिन्तन करते हैं तो मन, बुद्धिसे ही चिन्तन करेंगे। मन-बुद्धि प्रकृतिके हैं कि आपके? तो भगवान्‌के चिन्तनमें आप पराधीन हो गये। प्रकृति 'पर' है, आप स्वयं 'स्व' हो। 'पर'का सहारा लेना पड़ा, तो आप पराधीन हुए। ध्यान करो तो जड़का सहारा लेना पड़ेगा। समाधि लगाओ तो जड़का सहारा लेना पड़ेगा। पर जड़के द्वारा चेतनकी प्राप्ति होती नहीं। चेतनकी प्राप्ति जड़के त्यागसे होती है। जड़ताके त्यागसे चिन्मयतामें हमारी स्थिति होगी। जड़ताका आश्रय लेंगे,

न तो यह मैं हूँ, न मेरा है, न मेरे लिये है। ‘यह’ करके जिसको कहते हैं, वह ‘मैं’ कैसे हुआ? ‘यह’ ‘मैं’

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

नहीं होता। ‘मैं’ होता है, वह ‘यह’ नहीं होता। शरीर यह है, मन यह है, बुद्धि यह है, प्राण यह है। मैंपन यह है। तो ये सब हमारा स्वरूप कैसे हुए? न तो मैं हूँ और न ये मेरे हैं। खूब सोचो, इसे समझनेके लिये।

आपने किसीको पढ़ाया। किसीको आपने शिष्य बनाया। गायत्री-मन्त्र दिया आपने, तो वह आपका शिष्य हो गया और आप उसके गुरुजी हो गये। गुरु और

शिष्य दो हुए। अब तीसरा दोनोंका आपसका सम्बन्ध हुआ। यह सम्बन्ध एक अलग सत्ता हो गया। यह सम्बन्ध ही एक आफत हो गया। यह सम्बन्ध ही जन्म-मरणका कारण है। अतः जड़तासे सम्बन्ध-विच्छेद जल्दी-से-जल्दी कर लेना चाहिये। जड़तासे सम्बन्ध-विच्छेद होना ही अहंकारका मिटना है।

नारायण !

नारायण !

नारायण !

बोध-कथा—

चार मित्र

(डॉ० श्रीमती पृष्णारानीजी गर्ग)

चार मित्र थे। एक ब्राह्मण था, एक क्षत्रिय, एक वैश्य और एक शूद्र। चारोंमें इतना प्रेम था, जैसे एक प्राण, चार तन हों। चारों सदा साथ रहते, परदेश भी जाते तो एक साथ।

ब्राह्मण सम्पूर्ण शास्त्रोंका ज्ञाता था। क्षत्रिय शस्त्र-विद्यामें पूर्ण पारंगत था। वैश्यको व्यापारकी एक-एक बारीक कला ज्ञात थी। शूद्रमें सभीके प्रति सहज सेवा-भाव था। न किसीमें अहंकार था, न हीनभाव।

एक बार वे चारों घूमते-घूमते दूसरे नगरमें पहुँच गये। वहाँका राजा सन्तानहीन था। सन्तानकी आशा करते-करते वह वृद्ध हो चला। उसे अब किसी योग्य उत्तराधिकारीकी तलाश थी। राजाके सिंहासनके सामने एक सुन्दर-सी मिट्टीकी प्रतिमा रखी रहती। राजा स्वयं कलाकार था। उसने स्वयं ही गढ़कर यह प्रतिमा तैयार की थी। वह प्रतिमा सदा उसके सामने रहती और वह अक्सर सोचता 'काश! इस प्रतिमामें कोई प्राण फूँक देता तो यह सजीव हो उठती।'।

वे चारों मित्र एक दिन घूमते-घूमते उस राजाके दरबारमें जा पहुँचे। चारों राजाको झुककर प्रणाम कर रहे थे कि उनकी दृष्टि उस प्रतिमापर पड़ी। प्रतिमाका अनूठा सौन्दर्य उन्हें आकर्षित करने लगा। चारों विचार करने लगे 'क्या ही अच्छा होता कि यह प्रतिमा सजीव हो उठती।' तभी शूद्रने अपनी इच्छाशक्तिसे उसके पैरोंमें प्राणशक्ति आरोपित की। वैश्यने उसके हृदयप्रदेशमें चेतनाका संसार किया। क्षत्रियने अपनी सामर्थ्य शक्ति

शक्तिकी सहायतासे उसकी बाहुओंमें प्राण फूँके। अब ब्राह्मणने अपने ब्रह्मज्ञानके बलपर उसके मस्तिष्कमें प्राणोंका प्रवेश कराया। इतनेमें ही वह मिट्टीकी प्रतिमा जो अबतक निर्जीव खड़ी थी, एक सुन्दर सर्वगुण-सम्पन्न नवयुवकके रूपमें सजीव होकर सामने खड़ी हो गयी। सहसा यह चमत्कार देख राजा अपार हर्षसे झूम उठा। उसका ध्यान उन चारों मित्रोंपर गया। उसने उन्हें अपने पास बुलाकर कहा, 'आप चारोंमेंसे जिसने भी इस प्रतिमामें प्राण डाले हैं, मैं उसे अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहता हूँ।' ब्राह्मण विनम्रतासे बोला, 'महाराज! हम चारोंमें कोई अलग नहीं है, हम चार शरीर एक प्राण हैं, हम एक-दूसरेके बिना अधूरे हैं।' राजाने कहा, 'फिर आप ही निर्णय करके बतायें कि मैं किसे अपना उत्तराधिकारी घोषित करूँ?'

चारों मित्र कहने लगे, ‘महाराज ! हममेंसे किसीको भी राज्यका मोह नहीं है, आप हम चारोंकी प्रतिनिधिरूप इस प्रतिमाको ही अपना उत्तराधिकारी बना लें, हम चारोंने समानरूपसे प्रयत्न करके इस प्रतिमाको सजीव बनाया है। इस प्रतिमाके रूपमें हम चारों आपके सामने उपस्थित रहेंगे, जबतक आपके राज्यमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र प्रेम एवं सद्भावसे रहेंगे, तबतक यह प्रतिमा सजीव रहेगी।’ राजाने प्रसन्न होकर अपने उत्तराधिकारीका राज्याभिषेक किया। तभी सबने देखा कि उन चारों मित्रोंके नेत्रोंसे प्रकाशकी किरणें निकलीं

चेतनावाक्य गुंतार बिद्या क्षविये आपनी समर्पण धात्र औस नये प्राप्तवके नेत्रोंमें समा हवीं

कुकुल, महावन, गोवर्धन, फालैन, दाऊजी, मथुरा और

होलीपर विशेष—

‘लला फिर आइयो खेलन होरी’

(श्रीअर्जुनलालजी बन्सल)

भयंकर सर्दी, ठिठुरन और गगन-मण्डलसे झर-झर बहते ओसके शीतल कणोंको अपने आँचलमें समेटे माघमास विदा हुआ। रंग-रंगीले फाल्गुनमासका आगमन हुआ। वनप्रदेशमें मयूर नृत्य करने लगे, कदम्ब वृक्षकी डालपर बैठी कोयलके कण्ठसे सुरीले गीत सुनायी देने लगे। यमुनाके तटपर मृगोंके झुण्ड कुल्लाँचे भरने लगे। शीतल मन्द सुगन्धित वायुके झकोरे मानव-मनको आनन्दित करने लगे। पुष्प-वाटिकाओंमें खिले रंग-बिरंगे और सुगन्धित पुष्पोंपर भ्रमरोंके समूह गुंजारकर अपना हर्ष व्यक्त करने लगे। चारों ओर हर्ष और उल्लासकी बयार बहने लगी।

ऐसे मनमोहक वातावरणमें ब्रजप्रदेशमें होलीकी मादकता सबसे रंगीन महोत्सवके रूपमें चहुँ ओर छा जाती है। इस उत्सवका शुभारम्भ होता है, जब सम्पूर्ण प्रदेशमें कहीं ब्रजबालाएँ, कहीं ग्वाल-बाल और कहीं गोप-ग्वाले नाचते-गाते होलीके संगीतमय वातावरणमें मादकता और मस्ती भर देते हैं। इस समय सारे ब्रजवासी लोकमर्यादा, पारम्परिक रीति-रिवाजों तथा अपनी प्राचीन संस्कृतिको सँजोकर मस्तीभरे संसारमें विचरण करने लगते हैं। आनन्दरूपी अथाह सागरकी उत्ताल तरंगें जाति, धर्म और अमीरी-गरीबीके सारे बन्धन तोड़कर समाजको प्रेमके रंगोंसे सराबोरकर एकाकार कर देती हैं। कान्हाकी लीला-स्थली ब्रजमण्डलमें इस उत्सवका हर रंग निराला होता है।

बसन्त ऋतुके आगमनके साथ ही भगवान् श्रीकृष्ण और उनकी आह्लादिनी शक्ति श्रीराधारानी दिव्य स्वरूप धारणकर आज भी ब्रजमें ग्वाल-बाल और सखियोंके संग होलीका आनन्द लूटने पधारते हैं। श्रीराधारानी जब होली खेलती हैं, सारा आकाश गुलालके रंगोंसे ढक जाता है और श्रीकृष्णकी पिचकारीसे छूटे केसरके रंगसे धरतीमाता अपना शृंगार करती हैं। नन्दग्राम, बरसाना, गोकुल, महावन, गोवर्धन, फालैन, दाऊजी, मथुरा और

वृन्दावन आदि ब्रजक्षेत्रमें श्रीराधारानीके संग होली खेलकर श्रीकृष्ण अपने भक्तोंको आनन्दित करते हैं।

आइये, श्रीराधा-कृष्णकी होली-लीलाके दर्शन करने श्रीवृन्दावन चलते हैं। इस लीलाका सजीव वर्णन करते हुए सूरदासजीने लिखा है—

वृन्दावन श्याम मची होरी।

बाजत ताल मृदंग झाँझ ढप, बरसत रंग उड़त रोरी॥

कित ते आये कुँवर कन्हैया, कित तैं आई राधा गोरी।

नन्दग्राम ते आये कन्हैया, बरसाने ते राधा गोरी॥

कौनके हाथ कनक पिचकारी, कौनके हाथ अबीरकी झोरी।

कृष्णके हाथ कनक पिचकारी, राधाके हाथ अबीरकी झोरी॥

अबीर गुलालकी धूम मची है, फेंकत हैं भरि भरि कै झोरी।

सूरदास छवि देख मगन भये, राधे श्याम जुगल जोरी॥

श्रीवृन्दावनमें होलिकोत्सव प्रारम्भ हो गया, अनेक प्रकारके वाद्यवृन्द मुखरित हो उठे। नन्दग्रामसे श्रीकृष्ण अपनी स्वर्णकी पिचकारीमें केसर रंग भरकर तथा बरसानासे श्रीराधारानी अपनी झोलीमें अबीर-गुलाल भरकर वृन्दावनमें प्रवेश करते हैं। जैसे ही दोनोंका आमना-सामना होता है, कान्हाने अपनी पिचकारीके रंगसे श्रीराधारानीको सराबोर कर दिया और प्रियाजीने अपने दोनों हाथोंसे गुलाल-अबीरकी उनके ऊपर वर्षाकर उन्हें लाल रंगसे रँग दिया। श्रीराधा-माधवकी इस दिव्य लीलाके दर्शनकर सारी सृष्टि भाव-विभोर हो उठी।

इस पर्वपर ब्रजबालाएँ लोक-लाज त्यागकर अपने कान्हाके साथ होली खेलनेको आतुर हो उठती हैं। ऐसी ही एक मनोहारी लीलाका सजीव वर्णन करते हुए श्रीकृष्णभक्त रसखाने लिखा है—

रसखानि गुलालकी धूँधरमें, ब्रजबालनकी दुति यों दमकै।

मनो सावन माँझ ललाई के माँझ, चहुँ दिसि तैं चपला चमकै॥

मिलि खेलत फाग बढ़्यौ अनुराग, सुराग सनी सुख की रमकै।

कर कुंकुम लै करि कंजमुखी, प्रिय के दृग लावन कौं धमकै॥

इस प्रकार श्रीराधारानी अपने मोहनके मुखकी ओर गुलाल फेंककर अतिशय आनन्दका अनुभव कर रही हैं। ऐसे ही उत्साहके साथ सम्पूर्ण ब्रजमण्डलमें होलीकी

इस प्रकार गोपियोंने अपनी समस्त मनोकामनाएँ पूर्णकर श्रीकृष्णको ससम्मान अपने गाँवकी ओर यह कहते हुए विदा कर दिया कि ‘लला फिर आइयो खेलन होरी’।

परिवारका स्वरूप

(ब्रह्मचारी श्रीत्र्यम्बकेश्वरचैतन्यजी महाराज, अखिल भारतवर्षीय धर्मसंघ)

जिस प्रकार अच्छी फसल पानेके लिये हमको अच्छी भूमि, अच्छा बीज, अच्छी जलवायु तथा उचित समयके साथ शुभ-संकल्पवान् समर्पित-श्रमाराधक व्यक्तियोंकी आवश्यकता होती है, ठीक उसी प्रकार अच्छे सज्जन व्यक्तियोंको पानेके लिये हमें अच्छे संस्कारवान् माता-पिता, अच्छे वातावरणवाले परिवार, अच्छे संस्कार देनेवाले शिक्षक, अच्छे लोगोंका समाज तथा अच्छा विशुद्ध सद्दिचार, सदाचारयुक्त वातावरण आवश्यक होगा। किसी महापुरुषने बहुत अच्छी बात कही—यदि आप एक दशककी योजनामें सफलता पाना चाहते हैं तो अच्छी फसलें लगाओ। यदि आप सौ वर्ष (शताब्दी)—के लिये कोई योजना चाहते हैं तो आप श्रेष्ठ छाया तथा फल देनेवाले महावृक्ष लगाओ और यदि आप सहस्राब्दियोंको प्रभावित करनेके लिये कोई योजना बनाना चाहते हैं, तो आप अच्छे संस्कारवाले मनुष्योंसे सजे परिवारोंका सुन्दर समाज बनानेपर विचार कीजिये। अच्छे बालक ही अच्छे नागरिक बनेंगे तथा समाज और राष्ट्रको उन्नतिके शिखरपर ले जा सकेंगे।

जन्मसे पूर्व—इसकी शुरुआत तबसे करनी होगी जब पिताका तेज माताके गर्भमें स्थापित होनेका मुहूर्त होगा। भगवत्स्मरणपूर्वक इस गर्भाधान-संस्कारको भी हम वासनापूर्तिका साधन न मानकर उपासनाका अंग बना सकते हैं। समाज-सेवाके महायज्ञमें अपनी पवित्र आहुति दे सकते हैं। ये विषय समझनेके लिये हमें अपनी समझको श्रद्धासिक्त एवं उदार बनाना होगा। इतिहासकी घटनाओंको सही परिप्रेक्ष्यमें लेते हुए वैज्ञानिक तथा व्यवहारिक दृष्टिकोण विकसित करना होगा। प्रसिद्धि है कि अभिमन्युने चक्रव्यूहका भेदन करना माता सुभद्राके गर्भकी पाठशालामें ही सीखा था। योगीन्द्रवृन्द-वन्दित पादारविन्द ज्ञानादित्य श्रीअष्टावक्रजी महाराजको भी समग्र वेदराशिका बोध मातृगर्भकी पाठशालामें ही प्राप्त हुआ था। भक्तराज प्रह्लादजी महाराजने तो स्वयं स्वीकार किया कि जब मैं माताके गर्भमें था, तब श्रीनारदजी

महाराजने मेरी माताको दिव्य भक्ति-ज्ञानका उपदेश दिया था, माँ तो स्त्री होनेके कारण तथा समयाधिक्यके कारण भूल गयी, परंतु मैं नहीं भूला—

तत्तु कालस्य दीर्घत्वात् स्त्रीत्वान्मातुस्तिरोदधे।

ऋषिणानुगृहीतं मां नाधुनाप्यजहात् स्मृतिः॥

(श्रीमद्भा० ७।७।१६)

मातृगर्भकी शिक्षा-संस्कारके विषयमें श्रीशुकदेवजी स्वयं परम प्रमाण हैं। अधिक क्या कहें, शिवाजीके विषयमें सुना जाता है कि माता जीजाबाईजी उनको विविध पुराणोंकी कथा सुनाती थीं तथा भारतीय संस्कृतिकी रक्षा, गोरक्षा, हिन्दुत्व-रक्षा, देव-प्रतिष्ठाकी स्थापनाहेतु उस अजन्मे शिशुको प्रबोधित करती थीं, जिसका परिणाम आपके सम्मुख है। शिवाने कभी अपनी माँका वचन नहीं टाला तथा तुलजा भवानी और माता जीजाबाईजीमें अभेद मानकर सदा उनके चरण-वन्दन करके ही दिवसका आरम्भ किया। असंख्य उदाहरण हैं, जिनके द्वारा यह विषय समझा जा सकता है, अतः जब बालक माताके गर्भमें हो तब माताको पौष्टिक सात्त्विक पवित्र आहार, सात्त्विक पवित्र वातावरण मिले, जिससे माता प्रसन्न रह सके; क्योंकि उस समय माता रोती है, दुखी रहती है तो बालकका विकास प्रभावित होता है। माँ अधिक न सोये, अधिक न खाये, लड़े नहीं, बुरा न सोचे, भगवत्स्मरण करे।

जन्मके उपरान्त—आप ये मत समझना कि शिशु छोटा है, वह सुनता नहीं, समझता नहीं, जानता नहीं। आप ही सोचो जो शिशु गर्भवासमें सबकुछ जान सकता है, वह जन्मके उपरान्त क्यों नहीं जानेगा? हाँ! वह जानकर, सुनकर, देखकर, समझकर भी स्पष्ट प्रतिक्रिया नहीं कर पाता और यदि अपने ढंगसे वह संकेत करता भी है तो हम नहीं जान पाते, परंतु छोटे-से-छोटा बालक भी अनुकूलता पाकर मुसकराता है, किलकारी भरता है, हाथ-पैर हिलाता है, नजरें झुकाता है अथवा बहुत गौरसे एकटक आपको निहारता रहता है। यह वह

आजके समयमें सर्वाधिक आवश्यकता है कि

सच्चरित्रताका, सदाचारका, सद्व्यवहारका भाव बच्चोंमें आये, वे समाजको प्रकाश देनेलायक बन सकें—ऐसा प्रयास करें। हमारे बालक कायर-भीरु न बनें। उनके अन्दर सत्य-न्याय-सिद्धान्तके प्रति सम्मानका भाव हो। उन्हें बताया जाय कि हमारे पूर्वज चोटी-
Hinduism Discord Server <https://dsc.gg/dhinduism>
जमजका रक्षाके लिये मरने कटाना स्वीकार करसक्ये,

बच्चोंकी जिज्ञासाको दबाया न जाय, अपितु उसका उचित समाधान करके उनको सत्यकी खोजके लिये प्रेरित किया जाय।

१६ जुलाई, १९००को अपनी इच्छाशक्तिका कमाल दिखाते हुए ओलंपिकमें ऊँची कूद, लम्बी कूद और तिहरी कूद—तीनों प्रतिस्पर्धाओंमें उस बालकने स्वर्ण पदक प्राप्त किये। ऐसी लगन और प्रबल इच्छाशक्तिकी मिसाल कायम करनेवाले वह धावक, अमेरिकाके 'रे एवरी' थे। उनका जीवन इस बातकी प्रेरणा देता है कि दृढ़ इच्छाशक्तिके बलपर मनुष्य अपनी शारीरिक बाधाओंपर विजय प्राप्त कर लेता है।

असंग रहो और भगवान्‌को अपना मानो

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)

मेरे आत्मस्वरूप साधक महानुभाव! संसारसे सुखकी आशाके रहते त्याग नहीं होता, ममताके रहते विकार नहीं मिटते और कामनाओंके रहते शान्ति नहीं मिलती। चाहरहित हुए बिना योगकी सिद्धि नहीं मिलती, असंगताके बिना बोध नहीं हो सकता और आत्मीयताके बिना प्रेमकी प्राप्ति नहीं हो सकती। यह सब बातें ध्रुवसत्य हैं। या कहो कि प्रभुका ऐसा कुछ विधान ही है। इसलिये संसारसे सुखकी आशा मत करो। प्राप्तकी ममता और अप्राप्तकी कामना मत करो। निष्काम-भावसे सभी कर्म करो।

सब प्रकारकी स्वीकृतियोंसे असंग रहो और भगवान्‌को अपना मानो। फिर तुम जो कुछ भी साधन करोगे, उसमें सफलता अवश्य मिलेगी। परंतु जो साधन करो वह रुचिकर हो, सन्देहरहित हो और सामर्थ्यके बाहर न हो। कारण, रुचिकर होनेसे मन और सन्देह-रहित होनेसे बुद्धि साधनमें लग जाती है। और सामर्थ्यके भीतर होनेसे उकताहट तथा थकावट नहीं होती। इनके अतिरिक्त सफलता न मिलनेमें और कोई कारण नहीं है।

जानकारी, मान्यता और जो हम करते हैं, उसमें सफलता मिलना ही साधनकी सिद्धि है और सिद्धि कुछ नहीं। परंतु आज क्या होता है कि हम संसारकी वास्तविकताको जानते हुए भी उसकी आशाका त्याग नहीं कर पाते। हम भगवान्‌को मानते हैं, उनसे प्रेम करना चाहते हैं, परंतु नहीं कर पाते। हम ब्रह्म हैं अथवा आत्मा हैं, ऐसा मानते हैं, परंतु बोध नहीं होता। हम निर्दोष होना चाहते हैं, परंतु नहीं हो पाते।

हम भगवान्‌का चिन्तन-ध्यान करते हैं, परंतु

चित्तमें शान्ति नहीं मिलती। हम धर्मको जानते और मानते हैं, परंतु आचरणमें नहीं ला पाते। हमने योगकी क्रिया करते हुए जीवनका बड़ा भाग बिता दिया, परंतु प्रवृत्तियोंका निरोध नहीं कर पाये। यह तो है आजके साधकोंकी दशा। अब बताओ, क्या ऐसी जानकारी, क्रिया और मान्यतासे हमारा काम चल सकेगा? कहना होगा, नहीं चलेगा।

जानकारी, मान्यता और क्रियाओंका जबतक जीवनपर प्रभाव नहीं होगा, तबतक तो उन्हें वास्तविक भी नहीं कह सकते। फिर उनसे हमें लक्ष्यकी प्राप्ति हो ही कैसे सकती है? अर्थात् नहीं हो सकती। तो बताओ, त्याग और प्यार करना भी किसीसे सीखना पड़ता है क्या? जिसको असार और दुःखरूप जान लेंगे, उसका त्याग और जिसे अपना तथा सुखरूप मान लेंगे, उससे प्यार तो स्वतः होना चाहिये।

हम संसारको असत्य और दुःखद जानकर भी उसका त्याग और भगवान्‌को अपना तथा सुखधाम मानकर भी उनसे प्रेम नहीं कर पाते। इसका एकमात्र कारण यही है कि हम संसारसे सुखकी आशा करते रहते हैं एवं उस सर्व-समर्थ प्रभुको सरल हृदयसे अपना नहीं मानते।

याद रहे, और कुछ भी अपना है और परमात्मा भी अपना है—ये दोनों बातें एक साथ नहीं होतीं। जबतक हम और कुछ भी अपना मानते हैं, तबतक तो मुखसे कहते हुए भी हमने सच्चे हृदयसे भगवान्‌को अपना नहीं माना। यही इसकी पहचान है।

अतएव यदि इसी जन्ममें सफलता चाहते हो तो उपर्युक्त बातें जीवनमें उतारो, सफलता अवश्य मिलेगी।

यह बात परम सत्य है। ॐ आनन्द!

वर्तमान युगमें ज्योतिषका महत्त्व

(पं० श्रीसंजय शिवशंकरजी दवे, ज्योतिषाचार्य)

हमारे जीवनमें ग्रहोंका तारतम्य

पृथ्वीपर जो भी बीमारी पैदा होती है, जो भी महामारी पैदा होती है, वह सब कुछ नक्षत्रोंसे सम्बन्धित है, अब तो इसके वैज्ञानिक आधार भी मिल गये हैं, जब भी सूर्यपर ११ वर्ष पश्चात् आणविक विस्फोट होता है, तभी पृथ्वीपर युद्ध और क्रान्तियाँ बढ़ जाती हैं, जब सूर्यको ग्रहण लगता है तो पक्षी कई घण्टों पूर्व ही साधु-संन्यासीकी भाँति मौन हो जाते हैं, बन्दर वृक्ष छोड़कर जमीनपर आ जाते हैं और शान्ति व्याप्त हो जाती है।

पाइथागोरसने पाया कि नक्षत्रोंकी एक विशेष ध्वनि अपनी गतिसे पैदा होती है, जो जन्म लेनेवाले जातकके प्राथमिक संवेदनशील, सरलतम चित्तपर अंकित हो जाती है। जब मनुष्य अपने उस नक्षत्रसे तालमेल बना लेता है तो स्वस्थ होता है और जब उसका तालमेल उस मूल संगीतसे छूट जाता है तो वह अस्वस्थ हो जाता है। व्यक्तिको अपनी जन्म-कुण्डलीके अनुरूप ही रंगोंका चुनाव, मंत्र, साधना, भोजन और देव-पूजन करना चाहिये, ताकि ग्रहोंका तारतम्य बना रहे।

सम्पूर्ण जगत् एक आर्गेनिक यूनटी है, पूरा ब्रह्माण्ड एक शरीर है, सब संयुक्त हैं, इसलिये दूरस्थित तारा जब स्थिति बदलता है तो हमारे हृदयकी गतिको भी बदल देता है, रक्तकी धाराएँ भी बदल जाती हैं।

ज्योतिष एवं ग्रहोंका सही विश्लेषण होना जरूरी है, मेरा मानना है कि हमारे हाथमें ज्योतिषके अधूरे सूत्र हैं। अब मात्र घण्टे-दो घण्टेमें अगर मैं जातककी सटीक भविष्यवाणी कर दूँ तो शायद यह मेरे लिये असम्भव ही होगा।

पृथ्वीपर सारे ग्रह-नक्षत्रोंकी अनन्त किरणें टकराती हैं, शायद ही कोई ऐसी चीज है, जो उससे अप्रभावित हो। चाँदसे समुद्र प्रभावित होता है। समुद्रमें पानी और नमकका जो अनुपात है, वही अनुपात हमारे शरीरमें भी स्थित है, अगर चाँदसे समुद्रका जल प्रभावित हो जाता है तो मनुष्यपर उसका प्रभाव नहीं होगा, यह तो

असम्भव है। इसी कारण वाहन खरीदते समय, भवनमें प्रवेशके समय, विवाह आदिमें ग्रहोंकी अनुकूल स्थिति देखी जाती है, ताकि शुभ कार्योंके प्रारम्भमें आपका मन प्रसन्न और शान्त रहे, विषय-स्थितिसे आपका तारतम्य स्थापित हो सके।

पूर्णिमाके निकट आते-आते सारी दुनियामें कई लोगोंका मानसिक सन्तुलन विचलित हो जाता है तथा अमावस्याके दिन यह प्रभाव कम होता है। अगर हम मिलेट्रीके सेनापति, योद्धा, जनरलकी कुण्डलीका अध्ययन करें तो पायेंगे कि अधिकांशतः उनकी कुण्डलीमें मंगलका प्रभाव भारी रहेगा, वहीं धार्मिक एवं शान्तिवादीमें गुरुका प्रभाव प्रबल देखनेको मिलता है।

ज्योतिष विद्या एक बहुत वैज्ञानिक चिन्तन है, कुण्डलीमें ग्रहों एवं नक्षत्रोंके अध्ययनसे भविष्यके गर्तमें छुपी स्थितिको जानकर हम उचित धारामें शान्ति-समृद्धिको प्राप्त कर सकते हैं, अन्यथा विपरीत आयामोंमें हम तनाव, चिन्ता, अशान्ति ही प्राप्त करेंगे और यही स्थिति आज अधिकांश लोगोंके साथ देखनेको मिल रही है।

वर्तमानमें चल रही ज्योतिषशास्त्रके प्रति लोगोंकी भ्रान्ति और तर्क-वितर्कको परे हटाते हुए हमें इसके वास्तविक रहस्योंकी ओर अग्रसर होना होगा, जिससे हम अपने जीवनको सुव्यवस्थित और शान्तिमय बना सकें, यही समयकी माँग है।

जीवनमें ज्योतिषीय महत्त्व

मानव-जीवनमें जब भी संकटोंका दौर आता है तो उसकी सहज वृत्ति उसे ज्योतिषी, पण्डित, गुरु, इष्टकी ओर अग्रसर कर देती है, ऐसी विकट स्थितिमें मात्र मनुष्यद्वारा किया गया पुण्य-अर्जन और आत्मबल ही उसका सच्चा हितैषी होता है।

ग्रहोंकी विपरीत स्थितिमें भौतिक संसाधन किसी भी रूपमें हमारे पूर्ण सहयोगी नहीं बन सकते। इसलिये समय रहते ही हमें पुण्य-अर्जन कर लेना चाहिये।

जिस दिन हमारा मन विचलित और अशान्त रहता

विस्तारभयसे इन कथाओंमेंसे कुछेककी ही यहाँ चर्चा सम्भव है। वील्होजीकी 'कथा गुगलियैकी'में श्रीजाम्भोजी मारवाड़क्षेत्रमें पड़े घोर अकालके समय गाँवोंको छोड़कर उजड़ रहे लोगोंको आश्वस्त करते हैं और जबतक सुकाल नहीं हो गया, उनके लिये अन्नकी व्यवस्था करते हैं। वर्षा होनेपर अपने योगबलसे गूगलके धुएँसे एक ऊँट उत्पन्न करके उसपर किसानोंको तात्कालिक सिन्ध प्रदेशसे फसलोंके उत्तम बीज लानेके लिये भेजते हैं। वह ऊँट तेजगतिसे अपने कार्यको पूर्ण करके वापस आकर लुप्त हो जाता है। इस कथामें दर्शाया गया है कि सामर्थ्यवान्को सदा असमर्थकी सहायता करनी चाहिये ताकि वह समाजकी मुख्यधारासे जुड़ा रहे। किसानोंको सदा फसल बोते समय उत्तम बीजोंका ही प्रयोग करना चाहिये, इससे फसल भरपूर मिलती है, निम्न स्तरके बीजोंके कारण फसल खराब हो जाती है और किसानकी कमरतोड़ मेहनत बेकार

गोयंद नामक दो चोरोंकी कथा है। वे मारवाड़से सिन्ध प्रदेशमें पशु चुरानेके लिये जाते हैं। रास्तेमें बियावान, बहुत लम्बा-चौड़ा रेगिस्तान पड़ता है। गर्मीका मौसम था, उनके पास पानीसे भरी हुई चमड़ेकी बनी हुई 'पखाल' थी, उसे वे एक वृक्षपर टाँगकर चले जाते हैं। वहाँ जाकर उन्होंने बहुत-सी चोरियाँ कीं और वापस लौटते समय रेगिस्तानको पार करते हुए प्याससे व्याकुल होकर जैसे-तैसे उस वृक्षके पास पहुँचते हैं, पानी पीनेके लिये जैसे ही उस पखालको नीचे उतारा वह तो खाली मिली, किसी जानवरने उसे काट दिया था, जिससे सारा पानी बह गया। अब उनके प्राण सूखने लगे, उन्होंने श्रीजम्भोजीसे प्रार्थना की कि आज किसी प्रकार प्राण बच जाय तो हम यह चोरीका धन्धा छोड़ देंगे। तभी एक छोटा-सा बादल प्रकट होता है और पानी बरसाकर पासके एक बड़ेसे गड्ढेको भर देता है। अपने वादेके अनुसार उन्होंने चोरीरूपी निन्दित कर्मको त्याग दिया और पवित्र कमाई करके जीवनयापन करने लगे। एक दिन यात्राके समय वे किसीके यहाँ रात्रि-विश्रामके लिये रुके, चोरीका पुराना संस्कार जाग्रत् हो गया, रात्रिमें उठे और मकान-मालिककी बैलोंकी एक जोड़ी चुराकर रवाना हो गये। सुबह उठनेपर घरवालोंको वे दोनो यात्री और बैल गायब मिले। गाँवके बहुतसे लोग उनका पीछा करते हुए उनके समीप पहुँच गये, उन्होंने एक बार पुनः श्रीजम्भोजीसे रक्षा करनेकी प्रार्थना की, तब वे क्या देखते हैं कि उन बैलोंके रंग और सींगोंके आकार-प्रकार बदल गये हैं। बैलोंके मालिकने कहा कि रस्सी तो वही है, परंतु बैल वे नहीं हैं। उन दोनों चोरोंको पकड़कर बैलोंसहित श्रीजम्भोजीके समक्ष पेश किया गया, उन्होंने उन चोरोंको फटकारते हुए कहा कि—'अपने पापकर्मोंके लिये हृदयमें ग्लानि भरकर घोर पश्चात्ताप करते हुए उन कर्मोंको पुनः न करनेका संकल्प ही सच्चा प्रायश्चित्त है, परंतु ऐसे संकल्पके बाद भी दोबारा उन कर्मोंके करनेसे दुर्गति ही होगी; क्योंकि रोज-रोज बैलोंका रंग और सींगोंका आकार नहीं बदलेगा यानी ऐसेमें रक्षक कबतक रक्षा करेगा। दयाहीन और चोर स्वर्गमें प्रवेश

मिलती हैं। ‘कथा गजमोख’ गज और ग्राहकी लड़ाईमें हारते हुए प्राण कंठगत होनेपर गजराजद्वारा श्रीहरिसे की गयी करुण पुकारकी प्रसिद्ध पौराणिक कथा ‘गजेन्द्र मोक्ष’ का राजस्थानी भाषामें सरस और भावपूर्ण प्रस्तुतीकरण है। ‘कथा उषापुराण’ में पूर्वके शापवश कामदेव द्वापरयुगमें श्रीकृष्णके पौत्र अनिरुद्ध और कामदेवकी पत्नी रति बाणासुरकी पुत्री उषाके रूपमें जन्म लेते हैं, उसका वर्णन है। दो सौ बत्तीस छन्दोंका यह आख्यान काव्य राजस्थानी भाषामें एक उत्कृष्ट सृजन है। कविकी ‘भोगळ पुराण’ और ‘रामरासौं’ भी ऐसी ही रचनाएँ हैं।

‘कथा चेतन’ और ‘कथा चितावणी’ में जीवको अशुभ कर्मोंसे सावधान रहने और शुभ कर्मोंको करनेके लिये प्रेरित किया गया। कर्मोंका फल मिलना अवश्यम्भावी है। कवि चेतावनी देता है कि पापकर्मकी स्फुरणा भी न हो, अन्तःकरणकी भूमिमें पड़ा हुआ बीज कभी अंकुरित होगा, पेड़ बनेगा और फिर उसके फल हमें खाने पड़ेंगे, इसलिये हरि नामकी अग्निमें उस बीजको ही भून डालो। सर्वतोभावेन भगवान्के शरणागत होकर भगवत्प्रीत्यर्थ कर्म करनेसे कर्मके बन्धन कट जाते हैं।

निम्नलिखित सवैया एक प्रकारसे उनकी कथाओंका सार है और उनके शरणापन्नभावका श्रेष्ठ उदाहरण है—

मघ	कीयो	तदि	भाजि	गयो,
सिंघ	कियो	तदि	मारण	धायो ।
राजी	कीयो	तदि	दान	दियो,
रंक	कियो	तदि	मांगि के	पायो ।
जोई	कियो	सो	मानि	लियो,
अब	और	सोह	हरि के मनि	भायो ।

‘हे प्रभु! आपने मुझे हिरण बनाया, तो मैं जान बचाकर भागा, शेर बनाया तो शिकार किया, राजा बनाया तो दान दिया, भिखारी बनाया तो माँगकर गुजारा किया। आपने जो विधान किया वही मैंने स्वीकार किया और आगे भी जो आपको अच्छा लगे वही करना।’

वास्तवमें कथा तो वही है, जो जीवको भगवान्में लगा दे, बाकी तो सब व्यथा है। जाम्भाणी सन्तोंने अपनी कथाओंमें इस भावका सम्यक् निर्वहन करते हुए अपनी कलमसे ऐसी प्रेरणादायी कथाओंका सृजन किया है, जो अनन्त कालतक मुमुक्षुओंका मार्गदर्शन करती रहेंगी।

आचरण-शुद्धिमें बोधकथाओंकी भूमिका

(श्रीसुरेन्द्रजी माहेश्वरी)

बोधकथाको भावोंकी अभिव्यक्तिका अप्रतिम साधन माना जाता है। अनुभूतिके सहारे जब किसी सत्य घटनाका उज्ज्वल पक्ष प्रस्तुत किया जाता है तो ये कथाएँ अपना ठोस प्रभाव डालती हैं। इसकी समरसता तथा रसात्मकता या प्रस्तुत करनेकी विधिमें ज्ञान पक्ष प्रबल होता है। बोधकथाएँ किसी-न-किसी तरह ज्ञानार्जन कराती हैं, इसीलिये ये बोधकथाएँ कहलाती हैं।—डॉ० सुरेश वर्मा

वस्तुतः बोधकथाएँ धार्मिक, नैतिक, व्यावहारिक और मानव मनको उद्बलित करनेवाली होती हैं, जब बोधकथाके माध्यमसे सत्य घटनाका नीतिपरक पक्ष प्रस्तुत किया जाता है तो वह पूर्णतः उद्देश्यनिष्ठ होती

है। बोधकथाओंका मूल उद्गम जातक कथाएँ, पंचतन्त्र तथा हितोपदेशकी कथा-कहानियाँ ही हैं, जो पाठकके अन्तःकरणको सात्त्विक तथा मानवीय गुणोंसे परिपूर्ण करती हैं। प्राचीन कालमें बिगड़े राजकुमारोंको आदर्शवान् बनानेके लिये विष्णु शर्मा-जैसे पण्डितोंने इसी विधाका उपयोग किया था। भारतीय संस्कृतिमें हमारे धार्मिक ग्रन्थोंका विशेष महत्त्व रहा है। रामायण, महाभारत, वेद, उपनिषदों और अन्यान्य आख्यानोके माध्यमसे सत्यको उजागर किया गया है।

वर्तमानमें पाठकके पास समयका अभाव होता जा रहा है, अतः बोधकथाओंकी विशेष उपयोगिता मानी जा रही है। बोधकथाओंका कलेवर अत्यधिक प्रभावपूर्ण

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

और आकर्षक होता है। जो हृदय-तन्त्रियोंको तत्काल झंकृत कर देता है। किसी भी भटके बटोहीका मार्ग प्रशस्तकर उसे सन्मार्गकी दिशामें अग्रसर होनेकी चेतना प्रदान करता है। बोधकथाओंके सम्बन्धमें एमर्सनने कहा है—‘जो आदमी मेरा सन्देश सुनता है, जो मुझे समझता है, सदा-सदाके लिये उसपर मेरा अधिकार हो जाता है।’

वर्तमान समयमें नित्य नयी घटनाओंमें चोरी, डकैती, भ्रष्टाचार, दुष्कर्म, बलात्कार, उत्पीड़न, लूटपाट, हिंसा आदिका बाहुल्य है। इन समग्र घटनाओंका बाल मनपर कुत्सित और दुष्प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। वह विविध घटनाओंसे प्रभावित होकर भटक जाता है। ऐसी अवस्थामें बोधकथाएँ रामबाण-जैसी हैं। जो एक नयी चेतना और जागृति उत्पन्न करती हैं। प्राचीन कालमें वन्य जीवोंकी कहानियों, नीति कथाओं, जातक कथाओं, हातिमताई तथा अलिफ लैलाकी लघु कथाओंका विशेष प्रचलन रहा है। आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्रीके अनुसार जैसे महाकाव्यके आंशिक गुणोंसे युक्त काव्यको खण्डकाव्य अथवा गीतिकाव्य कहा जाता है, उसी प्रकार कथाशिल्पके आरम्भसे चरम बिन्दुतकके अनेक तत्त्वोंको प्रभावशाली ढंगसे आत्मसात्कर जो विधा प्रकाशमें आयी है, उसे बोधकथा कहते हैं। राजेन्द्र परदेसीका इस सन्दर्भमें कथन है—‘किसी भी घटनाको देखकर या सुनकर तत्क्षण जो प्रतिक्रिया कथ्यके रूपमें उभरती है, उसे बोधकथा कहते हैं।’

बोधकथाएँ जीवनको मधुर बनाती हैं। तात्त्विक संदेशोंसे भरपूर होती हैं। वस्तुतः बोधकथाएँ साहित्यरूपी उद्यानमें वे पुष्पावलियाँ हैं, जो मानवमात्रको जीवन-पर्यन्त अपनी सुगन्ध सौरभसे आकृष्ट करती रहती हैं। बोधकथाएँ लघु, सूक्ष्म, गहन, प्रहारक, पैनी, सांकेतिक और ग्राह्य होती हैं, अतः तत्काल प्रभावके लिये जानी जाती हैं। बोधकथाएँ वास्तविकताकी पथरीली और कठोर राहपर चलनेवाले राहीको सोचनेके लिये मजबूर कर देती हैं। इन कथाओंमें पात्रोंकी संख्या कम होती

है। ये कथाएँ सरस, सरल और बोधगम्य होती हैं। दैनिक जीवनसे सम्बद्ध घटनाक्रमसे जुड़ी होती हैं, जो प्रकाशस्तम्भका कार्य करती हैं।

शिक्षण संस्थाओंमें विषयाध्यापनमें कई बार ऐसे अवसर आ ही जाते हैं, जब किसी सन्दर्भ या घटनाक्रमका सहारा लेकर तथ्योंको स्पष्ट किया जाता है। ऐसे में बोधकथाओंका उपयोग प्रासंगिक होता है, जो विद्यार्थियोंमें संस्कारोंके निर्माणमें सहयोगी होती हैं।

विशेषतः शिक्षण संस्थाओंमें जहाँ नयी पीढ़ीकी पौध तैयार हो रही है, वहाँ यदि बोधकथाओंद्वारा बाल मनको पोषण दिया जाय तो कलके नागरिक सही मार्गका अनुसरण कर सकेंगे। उन्हें विषयाध्यापन, कला, शिक्षा, पुस्तकालय, वाचनालय, खेल-मैदान, सहगामी प्रवृत्तियों आदिमें बोधकथाओंका प्रयोग विशेष सार्थक सिद्ध होगा। आचरण-शुद्धिके लिये बोधकथाएँ एक सशक्त साधन हैं, बोधकथाओंकी भावभूमिके आत्मीकरणसे स्थायी परिवर्तनकी सम्भावनाएँ बन जाती हैं। बेईमान व्यक्ति ईमानदार, भ्रष्टाचारी सदाचारी, क्रूर दयालु और डरपोक निडर बननेकी दिशामें अग्रसर होता है। मानवीय मूल्योंका आविर्भाव होता है तथा व्यक्तिका नैतिक आचरण शुद्ध बनता है, जो राष्ट्र और समाजकी सुख-समृद्धिके लिये आवश्यक है। बोधकथाएँ मानव मनको अध्यात्म-अमृतसे सराबोर करती हैं तथा परमात्माके प्रति आस्था उत्पन्न करती हैं, जो विश्व-बन्धुत्वकी भावनाको प्रबल बनाती है।

बोधकथाओंसे परिचय कराना नैतिक शिक्षाकी दृष्टिसे उपयोगी सिद्ध होगा। इनके माध्यमसे बालकोंमें सदाचार, सेवा-भावना, उदारता, श्रमनिष्ठा, देशप्रेम, अनाचारोंसे मुक्ति और माता-पिता तथा गुरुजनोंके प्रति अगाध श्रद्धा उत्पन्न की जा सकती है। आवश्यकता है इस हेतु योजनाबद्ध शिक्षण प्रबन्धन एवं निर्देशनकी। अतः आजकी भागमभागवाली जीवन चर्यामें नैतिक आचरणके लिये बालकोंका दिशाबोध बोधकथाओंके माध्यमसे अधिक सार्थक सम्भव हो सकता है।

संत-वचनामृत

(वृन्दावनके गोलोकवासी सन्त पूज्य श्रीगणेशदासजी भक्तमालीके उपदेशपरक पत्रोंसे)

❖ भगवान्‌के स्वरूप पिता-माता, ब्राह्मण, सन्त, गुरुदेव, तुलसी, पीपल, मन्दिर तथा सब देवोंको प्रणाम करना चाहिये। शरीरसे साष्टांग अथवा वाणीसे प्रणाम यह भी सम्भव न हो तो मन-ही-मनसे नमस्कार कर लेना चाहिये। इस प्रकार भक्तिसे युक्त जिसका जीवन है, वह मुक्तिदाता श्रीकृष्णके चरणोंको, प्रेमको पानेका अधिकारी है। उसे भक्ति अवश्य प्राप्त होती है। राजा बलिने अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया, अन्तमें भगवान्‌ने और देवताओं-ऋषियोंने बड़ाई की।

❖ भक्तोंके लिये भगवान्‌ सर्वदा सर्वत्र कृपा करते हुए दिखायी पड़ते हैं। भक्त और अभक्त दोनोंपर प्रभु कृपा करते हैं। भक्तोंको प्रेमकर और दुष्टोंको मारकर प्रभु मोक्ष देते हैं। पतिव्रताका मन पतिकी ओर, कृपणका मन धनकी ओर, विषयीका मन विषयोंकी ओर जैसा लगता है, उसी प्रकार भक्तका मन भगवान्‌की ओर लगता है। ऐसी मनकी लगनसे भगवान्‌की कृपाका प्रत्यक्ष दर्शन होता है। जटायुपर कृपा करते समय भगवान्‌ने कहा—लक्ष्मण! शरणागतरक्षक, धर्मपरायण, शूरवीर सर्वत्र मिलते हैं, यहाँतक कि पशु-पक्षियोंकी अधम योनियोंमें भी। देखा! जटायु महान्‌ भक्त और धर्मात्मा हैं, तात्पर्य यह है कि भक्त सर्वत्र हैं।

❖ मुए सकल मरिहैं सकल घरी पलक के बीच।
तुलसी काहु नहिं लही गीधराज सी मीच॥
जो पैदा हुए हैं, वे अवश्य ही मरेंगे; चाहे अब चाहे घण्टाभर बाद अथवा सौ वर्ष बाद यानी सभी मरे हैं, आगे भी मरेंगे, परंतु जटायुकी-सी मृत्यु किसीको भी नहीं मिली। प्रभुकी गोदमें प्रभुको देखते हुए मृत्यु हुई। धन्य भक्त जटायु! धन्य भक्त जटायु!!

❖ हमारा स्वभाव है कि अनुकूलतामें भगवत्कृपा मानते हैं और प्रतिकूलतामें नहीं। किंतु सन्त अनुकूलता एवं प्रतिकूलतामें सर्वत्र भगवत्कृपाका ही अनुभव करते हैं। ईश्वर दयामय है, करुणामय है, कभी किसी जीवका अहित नहीं करता है। कदाचित्‌ जीवको शुद्ध करनेके लिये प्रभु दण्ड देते हैं।

❖ भगवत्-स्मरणसे सभी विघ्न दूर हो जाते हैं।

जिसके मनमें विश्व-कल्याणकी भावना है, वही भगवत्-प्रिय है। संसारी काम बन जायँ, सभी काम बन जायँ तभी हम भगवत्कृपा मानें—यह ठीक नहीं है। बहुत काम ऐसे हैं, जिनका बिगड़ना भी हमारे कल्याणके लिये है। कामके बननेसे या बिगड़नेसे कल्याण होगा—इस बातको हम नहीं जान सकते हैं। यह प्रभुको ही पता है। भगवत्कृपा और प्रारब्धपर विशेष विश्वास रखना चाहिये। हमारी दृष्टिमें थोड़ा समय है, ईश्वरकी दृष्टिमें अनन्त समय है।

❖ कृपामय प्रभुकी कृपा तो निरन्तर बरस ही रही है, पर हम लोग उसका सम्यक्‌ प्रकारसे अनुभव नहीं कर पाते हैं। सारे अनर्थोंका मूल अहंकार है, वही ज्ञान-भक्तिकी प्राप्तिमें बाधक है। प्रभु कृपा करके उसको नष्ट करते हैं, उस समय हम अज्ञानी जीव काल-कर्म-ईश्वरको भी दोष देने लग जाते हैं। जो कृपाश्रयीजन हैं, वे ही अनुभव करते हैं कि हमको जो कष्ट मिला है, वह या तो अहंकारको कम करनेके लिये है अथवा मिटानेके लिये है। भगवान्‌ जो भी करते हैं, उससे भक्तोंका कल्याण ही होता है।

❖ शरीरके स्वस्थ रहनेकी अपेक्षा मनके स्वस्थ रहनेकी महिमा अधिक है। मेरा मन प्रभुकी कृपाका किंचित्‌ अनुभव करता है, उसीसे प्रसन्न रहता है। शरीरका धर्म है पैदा होना, बढ़ना, क्षीण होना एवं नष्ट हो जाना। इन्हें हम लोग रोक नहीं सकते हैं, अतः जैसी स्थिति हो प्रभुका स्मरण करते रहें, यही अपना कर्तव्य है। इसमें भी प्रभुकृपाकी आवश्यकता है।

❖ भगवत्कृपाका अनुभव करना चाहिये। यह सबसे सरल साधन है। भजन-पूजन आदि जितने साधन हैं, उनमें कठिनाई है। सामग्री-संचय-विधिका भी कुछ-न-कुछ पालन अनिवार्य हो जाता है, पर कृपाका मनमें अनुभव करना इससे अति सरल है।

तुलसीदाससे पूछा गया कि अबतकके भजन-साधनसे आपको क्या मिला? तो उन्होंने कहा कि—जाकी कृपा लवलेस ते मतिमंद तुलसीदासहूँ।

पायो परम विश्रामु राम समान प्रभु नाहीं कहूँ॥

प्रभुकी लेशमात्र कृपासे मुझ मतिमन्दको परम

विश्राम प्राप्त हुआ। ['परमार्थके पत्र-पुष्प'से साभार]

जीव-शिक्षा-सिद्धान्त

[स्वाामी श्रीहरिदासकृत अष्टादश पद]

[गतांकसे आगे]

चतुर्दश पद

झूठी बात साँची करि दिखावत हो हरि नागर।
निसिदिन बुनत उधेरत जात प्रपंच कौ सागर॥
ठाट बनाइ धर्यौ मिहरी कौ हे पुरुष ते आगर।
सुनि हरिदास यहै जिय जानौ सुपने कौ सौ जागर॥

भावार्थ—अहो हे हरि! अर्थात् सबके मनको हरनेवाले। हे नागर चतुरशिरोमणि! हम आपकी चतुराई बताते हैं कि आप झूठी बात माने मिथ्या जो संसार है, उसे साँची करि दिखावत अर्थात् सत्य प्रतीत कराते हो। इस प्रपंचकौ अर्थात् विश्वको दिनमें बनाते हो और रात्रिमें नाश करते हो। अर्थात् जब ब्रह्माका दिन होता है, तब सृष्टि होती है और जब ब्रह्माकी रात होती है, तब प्रपंच—संसार तिरोहित हो जाता है—मिट जाता है। सो आप इस प्रपंचके सागर हो—न जाने कितने प्रपंच आपके भीतर भरे हैं।

हे पुरुष! तुम्हारी जो मिहरी माया है, उसके द्वारा आपने यह ठाट—विश्व बनाकर धर्यौ—धारण कर रखा है। आपकी सत्तासे ही यह संसार है। सो आप बड़े आगर—चतुर, श्रेष्ठ हो। रसिक अनन्य कमल-कुल-दिवाकर श्रीस्वामी हरिदासजी महाराज कहते हैं कि साधक! तू श्रीहरिका दास है, तूने उनकी शरण ली है, तो सुन, अपने जियमें यही जान कि यह सब संसार स्वप्नसे जागनेके समान है। जैसे मनुष्य सत्यरूपमें सोता हुआ भी स्वप्नमें अपना जागना देखता है; परंतु उसका वह जागना मिथ्या है; क्योंकि वास्तवमें वह सो ही रहा है। ऐसे ही शुभ-अशुभमय संसार सत्यके समान प्रतीत होता हुआ भी वास्तवमें मिथ्या ही है।

पंचदश पद

जगत प्रीति करि देखी नाहिने गटी कौ कोऊ।
छत्रपति रंक लौं देखै प्रकृति विरोध बन्यौ नहिं कोऊ॥
दिन जो गये बहुत जन्मनि के ऐसे जाऔ जिन कोऊ।

सुनि श्रीहरिदासकृत अष्टादश पद [स्वाामी श्रीहरिदासकृत अष्टादश पद]

भावार्थ—इस असत्, भ्रमरूप जगत् संसारसे प्रीति—

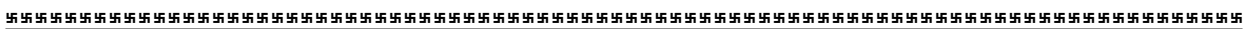
प्रेम करके देख लिया। जगत्में गटीका कोई नहीं है। कोई ऐसा नहीं है, जिससे प्रीतिकी—प्रेमकी गाँठ बँध जाय, बँध सके। छत्रपति—सम्राट् राजा सों लेकर रंक—अकिंचन, दीन-हीन, गरीब, भिखारीतक देख लिये, परंतु सब प्रकृति-विरुद्ध हैं—एककी प्रकृति एक सों बनती नहीं है। कोई भी प्रकृतिके विरुद्ध बना नहीं है। त्रिगुणात्मिका प्रकृतिके विरुद्ध किसीकी भी रचना नहीं हुई। अर्थात् जब जगत्की कारणभूत प्रकृति ही गुण विषमतासे युक्त है, तब उसके कार्य जगत्में समानता कैसे हो सकती है? और जहाँ समानता नहीं, वहाँ प्रीति कहाँ? वहाँ प्रीति—मित्रता कैसे हो सकती है? ऐसे देखते हुए बहुत—असंख्य जन्मोंके जो दिन बीत गये, वैसे अब एक दिन भी वृथा मत जाय। रसिक अनन्य नृपति श्रीस्वामी हरिदासजी महाराज कहते हैं कि 'सुनो, हमें तो प्रेम-रस-माधुर्यनिधि श्रीविहारीजी अच्छे मित्र मिल गये। जैसे हमें श्रीविहारीजी भले-अच्छे मिले, ऐसे सबको मिलें, सब कोई पाओ, सबके ऊपर कृपा करें, यह आपका सबको आशीर्वाद है।

षोडश पद

लोग तौ भूलै भलै भूलें तुम जिन भूलौ माला धारी।
अपनौ पति छाँड़ि औरनि सों रति ज्यों दारनि में दारी॥
स्याम कहत ते जीव मोतें विमुख भये
जिन दूसरी करि डारी।

कहिं श्रीहरिदास जज्ञ देवता पितरनि कौं श्रद्धा भारी॥

भावार्थ—अनादि कर्मात्मक अविद्यारूप मायासे विवश, मुग्ध अज्ञानी साधारण लोग—मनुष्य श्रीहरिको भूल रहे हैं, तो वे भले ही भूलें—भूला करें; क्योंकि जिनको भगवान् श्रीहरिका माहात्म्य (महिमा)—ज्ञान नहीं, जो श्रीहरिके स्वरूप, प्रभाव, गुण, महिमा आदिको जानते नहीं, उनसे हम क्या कहें? वे तो अन्ध, मूढ़, विषयासक्त, विमुग्ध प्राणी हैं। परंतु हे माला धारण करनेवाले जनो! हे



श्रीहरिके हो चुके हो। तुम तो श्रीहरिको मत भूलो तथा अपने स्वरूपको भी मत भूलो; क्योंकि अपने स्वरूपको जाने बिना श्रीहरिको कैसे भजोगे ?

अपनौ पति श्रीहरि, उनको छोड़कर और देवान्तर (देवता, पितर आदि) सों रति (प्रीति) करनेमें निन्दा है। जैसे असत् स्त्री पतिव्रतधर्मको न पालनकर अपने पतिको छोड़कर परपुरुषसे रति—प्रेम करती है, तो वह स्त्री दारनि व्यभिचारिणी, कुलटा, वेश्या कहलाती है। ऐसे ही उस पुरुषकी निन्दाको जानना चाहिये, जो फलकी कामनासे श्रीहरि सों विमुख होकर अन्य देवतान्तरमें आसक्त है।

श्याम—श्रीविहारीजी कहते हैं कि जिन जीवोंने मेरा सम्बन्ध छोड़कर मेरा भजन छोड़कर फलकी कामनासे अन्य दूसरे देवतादिक सों सम्बन्ध जोड़ लिया, उनका भजन किया; वे जीव मुझसे विमुख हो गये।

श्री अर्थात् प्रियाजी और हरि यानी श्रीविहारीजी, उनके दास-रसिक-अनन्य मुकुटमणि श्रीस्वामी हरिदासजी महाराज कहते हैं कि इनकी यज्ञ, प्राकृत देवता और पितरोंमें तो भारी बहुत बड़ी श्रद्धा है, जो कि क्षणिक, आपातरमणीय सुखको देनेवाले हैं, और जो परात्पर, परमसुखस्वरूप पुरुषोत्तम श्रीहरि—श्रीविहारीजी हैं, उनसे विमुख हो रहे हैं। सो हे वैष्णवो! मालाकण्ठी धारण करनेवाले जनो! तुम गुरु-गोविन्द (गोविन्दस्वरूप गुरु) सों श्रीकृष्ण-मन्त्रोपदेश ग्रहण कर चुके हो, सो तुम्हारा भूलना अनुचित है।

सप्तदश पद

जोलौं जीवै तौलौं हरि भजि रे मन और बात सब बादि।
छौस चारि के हलाभला में तू कहा लेयगौ लादि॥
माया मद गुन मद जोवन मद भूल्यौ नगर विवादि।
कहि श्रीहरिदास लोभ चरपट भयौ काहे की लगै फिरादि॥

भावार्थ—रे मन! अरे मन! जबतक जीवन है, जीवित है, तबतक केवल श्रीहरिका भजन ही कर। भजनके अतिरिक्त और सब बातें विवादमात्र हैं, अर्थात् त्याज्य हैं, व्यर्थ हैं। अथवा जबतक जीवन है, तबतक ऐसा नियम कर कि पहले हरिका भजन करना, उसके बाद और कुछ बात करना, अन्य सब बातें करना।

चार दिनके हलाभला अर्थात् क्षणिक जीवन अथवा हबड़-हबड़में तू क्या लादकर ले जायगा? अर्थात् भगवद्भजनयोग्य अमूल्य समयको व्यर्थकर, क्लेश सहकर वस्तुएँ इकट्ठी करीं—कोई झूठ बोलकर, कोई धोखा देकर, ऐसे हायतोबा सों जो सांसारिक वस्तुएँ संग्रह करीं, क्या उनको तू लादकर संग ले जायगा? अर्थात् वे सब यहीं धरी रह जायँगी और तू चल बसेगा। इसलिये सांसारिक वस्तुओंकी लिप्सा—इच्छा मत कर।

धन, गुण और यौवन आदिके मिथ्या मद—अभिमानमें पड़कर प्राणी—मनुष्य भगवान्को भूल गया और नगर—संसारके विवादमें भूल रहा है, फँस रहा है।

इस पंक्तिमें पाठान्तर है—**धन मद जोवन राज मद भूल्यौ नगर विवादि**। धन, यौवन, राज्यादि विभूतियोंके मिथ्या मद—अभिमानमें पड़कर प्राणी मनुष्य भगवान्को भूल गया और नगर—संसारके विवादमें भूल रहा है, फँस रहा है। अथवा विवाद—बहस, झगड़ा, प्रपंचके नगरमें पड़ा हुआ भूल रहा है, फँस रहा है। अर्थात् पूर्वोक्त जो मद हैं, वे परमेश्वरसे बहिर्मुख करानेवाले अनर्थोंके—दोषोंके मूल हैं। इसलिये उनका मद—अभिमान मनमें न लाना चाहिये।

रसिक अनन्य नृपति श्रीस्वामी हरिदासजी महाराज कहते हैं कि भगवद्भजन भी करता है और फिराद—फरियाद—प्रार्थना, पुकार भी करता है, परंतु लोभ है—लोभासक्त है, तो उस लोभने चरपट—नाश कर दिया है, इससे फिराद क्यों लगे? अर्थात् प्रार्थना स्वीकार नहीं होती है।

अथवा श्रीस्वामी हरिदासजी महाराज कहते हैं कि यदि लोभ—लोभादि—काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सरादि ये चरपट—नाश हो गये, तो फिराद क्यों लगे, किसलिये लगे? अर्थात् प्रार्थना करनेकी जरूरत ही नहीं पड़ती, फिर तो परमेश्वर स्वयं ही कृपा करते हैं। इसलिये लोभादिकोंका सर्वथा परित्याग करना चाहिये।

अथवा श्रीस्वामीजी महाराज कहते हैं कि एक दिन तेरी ये लोभनीय सब वस्तुएँ नष्ट हो जायँगी, तब फिर तेरी कोई फिराद नहीं लगेगी। इसलिये लोभादिका

अथवा प्रेम-रसका स्वरूप जानना चाहते हो तो अपने भावरूप परदेको हटाकर ठाकुर श्रीविहारीजीसे भाव जोड़ो और उनको देखो, उनके प्रेम-रसके स्वरूपको जानो, पहचानो। वे सबके शासक—ईश्वर होते हुए भी अपनी प्राणप्रियाकी रुचिको लिये हुए सदा-सर्वदा एकरस अपने नित्य केलि-विहार रसमें मग्न—तत्पर रहते हैं, उनका सेवन करते हैं। [समाप्त]

प्यासी गौको जल पीनेसे रोकनेके कारण पुत्रहीनता

प्राचीनकालकी बात है, द्वापरयुगके प्रारम्भका समय था, माहिष्मतीपुरीमें राजा महीजित् अपने राज्यका पालन करते थे, किंतु उन्हें कोई पुत्र नहीं था। अपनी अवस्था अधिक देख राजाको बड़ी चिन्ता हुई। उन्होंने प्रजावर्गमें बैठकर इस प्रकार कहा—‘प्रजाजनो! इस जन्ममें मुझसे कोई पातक नहीं हुआ। मैंने अपने खजानेमें अन्यायसे कमाया हुआ धन नहीं जमा किया है। ब्राह्मणों और देवताओंका धन भी मैंने कभी नहीं लिया है। प्रजाका पुत्रवत् पालन किया, धर्मसे पृथ्वीपर अधिकार जमाया तथा दुष्टोंको, वे बन्धु और पुत्रोंके समान ही क्यों न रहे हों, दण्ड दिया है। शिष्ट पुरुषोंका सदा सम्मान किया और किसीको द्वेषका पात्र नहीं समझा। फिर क्या कारण है, जो मेरे घरमें आजतक पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ। आपलोग इसका विचार करें।’

राजाके ये वचन सुनकर प्रजा और पुरोहितोंके साथ ब्राह्मणोंने उनके हितका विचार करके गहन वनमें प्रवेश किया। राजाका कल्याण चाहनेवाले वे सभी लोग इधर-उधर घूमकर ऋषिसेवित आश्रमोंकी तलाश करने लगे। इतनेहीमें उन्हें मुनिश्रेष्ठ लोमशजीका दर्शन हुआ। लोमशजी धर्मके तत्त्वज्ञ, सम्पूर्ण शास्त्रोंके विशिष्ट विद्वान्, दीर्घायु और महात्मा हैं। वे महामुनि तीनों कालोंकी बातें जानते हैं। उन्हें देखकर सब लोगोंको बड़ा हर्ष हुआ। माहिष्मतीपुरीके लोगोंको अपने निकट आया देख लोमशजीने पूछा—‘तुम सब लोग किसलिये यहाँ आये हो? अपने आगमनका कारण बताओ। तुमलोगोंके लिये जो हितकर कार्य होगा, उसे मैं अवश्य करूँगा।’

प्रजाओंने कहा—ब्रह्मन्! इस समय महीजित् नामवाले जो राजा हैं, उन्हें कोई पुत्र नहीं है। हमलोग उन्हींकी प्रजा हैं, जिनका उन्होंने पुत्रकी भाँति पालन किया है। उन्हें पुत्रहीन देख, उनके दुःखसे दुखित हो हम तपस्या करनेका दृढ़ निश्चय करके यहाँ आये हैं। द्विजोत्तम! राजाके भाग्यसे इस समय हमें आपका दर्शन मिल गया है। महापुरुषोंके दर्शनसे ही मनुष्योंके सब कार्य सिद्ध

हो जाते हैं। मुने! अब हमें उस उपायका उपदेश कीजिये, जिससे राजाको पुत्रकी प्राप्ति हो।

उनकी बात सुनकर महर्षि लोमश दो घड़ीतक ध्यानमग्न हो गये। तत्पश्चात् राजाके पूर्वजन्मका वृत्तान्त जानकर उन्होंने कहा—‘प्रजावृन्द! सुनो—राजा महीजित् पूर्वजन्ममें मनुष्योंको चूसनेवाला धनहीन वैश्य था। वह वैश्य गाँव-गाँव घूमकर व्यापार किया करता था। एक दिन जेठके शुक्लपक्षमें दशमी तिथिको, जब दोपहरका सूर्य तप रहा था, वह गाँवकी सीमामें एक जलाशयपर पहुँचा। पानीसे भरी हुई बावली देखकर वैश्यने वहाँ जल पीनेका विचार किया। इतनेहीमें वहाँ बछड़ेके साथ एक गौ भी आ पहुँची। वह प्याससे व्याकुल और तापसे पीड़ित थी; अतः बावलीमें जाकर जल पीने लगी। वैश्यने पानी पीती हुई गायको हाँककर दूर हटा दिया और स्वयं पानी पीया। उसी पाप-कर्मके कारण राजा इस समय पुत्रहीन हुए हैं। किसी जन्मके पुण्यसे इन्हें अकण्टक राज्यकी प्राप्ति हुई है।’

प्रजाओंने कहा—मुने! पुराणमें सुना जाता है कि प्रायश्चित्तरूप पुण्यसे पाप नष्ट होता है; अतः पुण्यका उपदेश कीजिये, जिससे उस पापका नाश हो जाय।

लोमशजी बोले—प्रजाजनो! श्रावणमासके शुक्लपक्षमें जो एकादशी होती है, वह ‘पुत्रदा’के नामसे विख्यात है। वह मनोवांछित फल प्रदान करनेवाली है। तुमलोग उसीका व्रत करो।

यह सुनकर प्रजाओंने मुनिको नमस्कार किया और नगरमें आकर विधिपूर्वक पुत्रदा एकादशीके व्रतका अनुष्ठान किया। उन्होंने विधिपूर्वक जागरण भी किया और उसका निर्मल पुण्य राजाको दे दिया। तत्पश्चात् रानीने गर्भ धारण किया और प्रसवका समय आनेपर बलवान् पुत्रको जन्म दिया।

इस पौराणिक वृत्तान्तसे यह सिद्ध होता है कि गोमाताकी अवहेलनासे सन्तानहीनता और उनकी कृपासे सन्तानकी प्राप्ति होती है। [पद्मपुराण]

उदासीनाचार्य श्रीश्रीचन्द्रजी महाराज

(स्वामी श्रीसर्वदानन्दजी महाराज, दर्शनरत्न)

उदासीन-सम्प्रदायके प्रवर्तक भगवान् श्रीश्रीचन्द्रजी महाराजका आविर्भाव सं० १५५१ भाद्रपद शु० ९ को तलवण्डी नामक गाँवमें, जो लाहौरसे ३० कोस पश्चिम है तथा आजकल जिसको ननकाना कहते हैं, क्षत्रिय-कुलभूषण श्रीनानकदेवजीकी धर्मपत्नी श्रीसुलक्षणादेवीके गर्भसे हुआ था।

जिस समय आप इस पृथ्वीतलपर आविर्भूत हुए, उसी समय आपका शिशु-शरीर जटा-भस्मादिसे विभूषित था और ज्यों-ज्यों वह बड़ा हुआ, त्यों-त्यों आपने जो एक-से-एक अद्भुत चमत्कार दिखलाये, उनको देख-सुनकर लोगोंको यह पक्का विश्वास हो गया कि आप कोई अलौकिक महापुरुष हैं, तथा विषयान्ध जीवोंके उद्धारार्थ ही आपका इस मर्त्यलोकमें पधारना हुआ है। यथासमय आपका यज्ञोपवीत-संस्कार सम्पन्न हो गया और आप विद्याध्ययनके लिये काश्मीर भेज दिये गये। वहाँ आपने अल्पकालमें ही वेद-वेदांगोंका विधिवत् अध्ययन कर लिया और जब आप ब्रह्मचर्याश्रमका पालन करते हुए सकल शास्त्रनिष्णात हो गये, तब अर्थात् सं० १५७५की आषाढ़ी पूर्णिमाको काश्मीरमें ही आपने सद्गुरु स्वामी श्रीअविनाशिरामजीसे उदासीन-सम्प्रदायानुसार दीक्षा ले ली। तत्पश्चात् कुछ दिनोंतक गुरुदेवकी ही सेवामें रहकर आप उनके उपदेशामृतका पान करते रहे। जब आपने धर्मोद्धारका समय देखा तब भारतभ्रमणके लिये निकल पड़े, उत्तर भारतसे लेकर दक्षिण भारतके प्रायः समस्त तीर्थोंका आपने परिभ्रमण किया और अपने उपदेशोंद्वारा धार्मिक जगत्में एक नवीन जागृति फैला दी। फिर अन्य स्थानोंमें भी जा-जाकर आपने कितने पाप-परायण जीवोंका उद्धार किया, इसकी कोई गणना नहीं की जा सकती।

कुछ समयके अनन्तर आप फिर काश्मीरकी ओर चले गये और वहाँ जाकर आपने वेद-भाष्योंकी रचना की। तत्पश्चात् आपका पदार्पण पेशावर तथा काबुलकी ओर हुआ। उधरके यत्किंचित् हिन्दुओंका जीवन विधर्मियोंके दबावसे संकटमय था अतः आपने कई स्थानोंपर अपनी

योगशक्तिके प्रभावसे हिन्दुओंकी रक्षा की। जहाँ-जहाँ आपने हिन्दुओंकी रक्षा की, वहाँ-वहाँपर अबतक आपके स्मारक बने हुए हैं। उसी समय सिन्धुके हिन्दुओंपर भी यवनोंका बड़ा भारी अत्याचार हो रहा था। वहाँके ठट्ठा नामक नगरमें यह हालत थी कि हिन्दूलोग मन्दिरोंमें आरती करते समय यवनोंके भयसे घण्टा-शंख भी नहीं बजा पाते थे और खुलेआम पाठ-पूजा तो बन्द थी ही। यह सुनकर आप शीघ्र ही वहाँ पहुँचे और अपने योगबलसे वहाँके राजाको परास्त करके आपने हिन्दुओंको धार्मिक स्वतन्त्रता दिलायी। इसी प्रकार आपने जहाँगीर बादशाहको भी एक बार अपने योगबलका परिचय देकर प्रभावित किया था और काबुलके वजीर खाँ नामक मुसलमानपर तो आपकी योगशक्तिका प्रभाव जादूकी तरह पड़ा था। वह आपके उपदेशोंके प्रभावसे भगवान् श्रीकृष्णका अनन्य भक्त बन गया और 'हे कृष्ण विष्णो मधुकैटभारे' की ध्वनि लगाने लगा। तात्पर्य यह कि आपने लोकहितके लिये थोड़े नहीं, असंख्य चमत्कार दिखलाये और अपनी कीर्ति-ध्वजाको सारे देश-देशान्तरोंमें फहरा दिया। स्थानाभावके कारण आपकी अन्य अलौकिक लीलाओंका वर्णन यहाँ नहीं आ सकता और न आपके बहुमूल्य उपदेश ही यहाँ दिये जा सकते हैं। जिन्हें आपके जीवनकी अनन्त घटनाओं तथा आपके दिव्य उपदेशोंको जानना हो, उन्हें श्रीचन्द्रप्रकाश, उदासीनधर्मरत्नाकर, उदासीनमंजरी प्रभृति ग्रन्थोंका अवलोकन करना चाहिये। उदासीन-सम्प्रदायके प्रचारद्वारा सनातन-धर्मका दिग्विजय कराते हुए आप १५० वर्षतक इस धराधामपर विद्यमान रहे; परन्तु फिर भी वृद्धावस्था आपके पास फटकीतक नहीं। आप अपने योगबलसे सदा नौजवान ही बने रहे। जब आपके निर्वाणका अवसर आया तब आप चम्बाकी पार्वत्य गुफाओंमें जाकर तिरोहित हो गये, इसी कारण आपकी निर्वाणतिथिका ठीक-ठीक पता नहीं चलता। ठट्ठा, वारहठ, श्रीनगर, कान्धार और पेशावर—ये पाँच आपके मुख्य निवासस्थान थे। आपके बाद आपके अनेकों शिष्य भी बड़े-बड़े सिद्ध तथा सन्त हुए और उन्होंने भी विश्वका बड़ा हिस्सा विजित किया।

arma r MADE WITH LOVE BY Avinash/Sh

सं० २०७७, शक १९४२, सन् २०२०, सूर्य उत्तरायण, वसन्त-ऋतु, वैशाख कृष्णपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वदि
प्रतिपदा प्रातः ५।५८ बजेतक	गुरु	स्वाती रात्रिमें ३।१२ बजेतक	९ अप्रैल	× × × ×
तृतीया रात्रिमें १।३८ बजेतक	शुक्र	विशाखा " १।५३ बजेतक	१० "	भद्रा दिनमें २।३९ बजेसे रात्रिमें १।३८ बजेतक, वृश्चिकराशि रात्रिमें ८।१२ बजेसे।
चतुर्थी " ११।५१ बजेतक	शनि	अनुराधा " १२।५० बजेतक	११ "	संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय रात्रिमें १०।० बजे, मूल रात्रिमें १२।५० बजेसे।
पंचमी " १०।२४ बजेतक	रवि	ज्येष्ठा " १२।७ बजेतक	१२ "	धनुराशि रात्रिमें १२।७ बजेसे।
षष्ठी " ९।१९ बजेतक	सोम	मूल " ११।४८ बजेतक	१३ "	भद्रा रात्रिमें ९।१९ बजेसे, मेष-संक्रान्ति रात्रिमें १०।२८ बजे, वैशाखी, मूल रात्रिमें ११।४८ बजेतक। खरमास समाप्त।
सप्तमी " ८।४३ बजेतक	मंगल	पू०षा० " ११।५८ बजेतक	१४ "	भद्रा दिनमें ९।० बजेतक।
अष्टमी " ८।३८ बजेतक	बुध	उ०षा० " १२।३८ बजेतक	१५ "	मकरराशि प्रातः ६।८ बजेसे, श्रीशीतलाष्टमीव्रत।
नवमी " ९।३ बजेतक	गुरु	श्रवण " १।४७ बजेतक	१६ "	× × × ×
दशमी " ९।५९ बजेतक	शुक्र	धनिष्ठा रात्रिमें ३।२५ बजेतक	१७ "	भद्रा दिनमें ९।३१ बजेसे रात्रिमें ९।५९ बजेतक, कुम्भराशि दिनमें २।३५ बजेतक, पञ्चकारम्भ दिनमें २।३५ बजे।
एकादशी " ११।२२ बजेतक	शनि	शतभिषा रात्रिशेष ५।५ बजेतक	१८ "	वस्तुथिनीएकादशीव्रत (सबका), श्रीबल्लभाचार्य-जयन्ती।
द्वादशी " १।६ बजेतक	रवि	पू०भा० अहोरात्र	१९ "	मीनराशि रात्रिमें १।६ बजेसे, सायन वृषराशिका सूर्य रात्रिमें १०।१० बजे।
त्रयोदशी " ३।६ बजेतक	सोम	पू०भा० प्रातः ७।५१ बजेतक	२० "	भद्रा रात्रिमें ३।६ बजेसे, सोमप्रदोषव्रत।
चतुर्दशी रात्रिशेष ५।१२ बजेतक	मंगल	उ०भा० दिनमें १०।२६ बजेतक	२१ "	भद्रा दिनमें ४।९ बजेतक।
अमावस्या अहोरात्र	बुध	रेवती " १।४ बजेतक	२२ "	मेषराशि दिनमें ४।९ बजेसे, पञ्चक समाप्त दिनमें १।४ बजे, श्राद्धकी अमावस्या
अमावस्या प्रातः ७।११ बजेतक	गुरु	अश्विनी " ३।३२ बजेतक	२३ "	अमावस्या

सं० २०७७, शक १९४२, सन् २०२०, सूर्य उत्तरायण, वसन्त-ऋतु, वैशाख-शुक्लपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदादिनमें ८।५५ बजेतक	शुक्र	भरणी सायं ५।४४ बजेतक	२४ अप्रैल	वृषराशि रात्रिमें १२।१२ बजेसे।
द्वितीया " १०।१७ बजेतक	शनि	कृत्तिका रात्रिमें ७।३४ बजेतक	२५ "	श्रीपरशुराम-जयन्ती।
तृतीया " ११।१३ बजेतक	रवि	रोहिणी " ८।५५ बजेतक	२६ "	भद्रा रात्रिमें ११।२६ बजेसे, वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, अक्षयतृतीया।
चतुर्थी " ११।३८ बजेतक	सोम	मृगशिरा " ९।४५ बजेतक	२७ "	भद्रा दिनमें ११।३८ बजेतक, मिथुनराशि दिनमें ९।२० बजेसे, भरणीका सूर्य दिनमें २।४३ बजे।
पंचमी " ११।३१ बजेतक	मंगल	आर्द्रा " १०।५ बजेतक	२८ "	आद्यजगद्गुरु श्रीशंकराचार्य-जयन्ती।
षष्ठी " १०।५३ बजेतक	बुध	पुनर्वसु " ९।५९ बजेतक	२९ "	कर्कराशि दिनमें ३।५९ बजेसे, श्रीरामानुजाचार्य-जयन्ती, श्रीगंगासप्तमी।
सप्तमी " ९।४८ बजेतक	गुरु	पुष्य रात्रिमें ९।२३ बजेतक	३० "	भद्रा दिनमें ९।४८ बजेसे रात्रिमें ९।४ बजेतक, मूल रात्रिमें ९।२३ बजेसे।
अष्टमी " ८।१९ बजेतक	शुक्र	आश्लेषा " ८।३० बजेतक	१ मई	सिंहराशि रात्रिमें ८।३० बजेसे, श्रीसीतानवमी।
नवमी प्रातः ६।२९ बजेतक	शनि	मघा " ७।१५ बजेतक	२ "	मूल रात्रिमें ७।१५ बजेतक।
एकादशी रात्रिमें २।६ बजेतक	रवि	पू०फा० सायं ५।४९ बजेतक	३ "	भद्रा दिनमें ३।१५ बजेसे रात्रिमें २।६ बजेतक, कन्याराशि रात्रिमें ११।२५ बजेसे, मोहिनी एकादशीव्रत (स्मार्त)।
द्वादशी " ११।४१ बजेतक	सोम	उ०फा० दिनमें ४।१२ बजेतक	४ "	एकादशीव्रत (वैष्णव)।
त्रयोदशी " ९।१४ बजेतक	मंगल	हस्त प्रातः ४।३२ बजेतक	५ "	तुलाराशि रात्रिमें १।४१ बजेसे, भौमप्रदोषव्रत।
चतुर्दशी सायं ६।४८ बजेतक	बुध	चित्रा " १२।५३ बजेतक	६ "	भद्रा सायं ६।४८ बजेसे, व्रतपूर्णिमा, श्रीनृसिंहचतुर्दशीव्रत।
पूर्णिमा दिनमें ४।३० बजेतक	गुरु	स्वाती " ११।२० बजेतक	७ "	भद्रा प्रातः ५।३९ बजेतक, वृश्चिकराशि रात्रिशेष ४।१८ बजेसे, श्रीबुद्धपूर्णिमा, श्रीबुद्धजयन्ती, वैशाख-स्नान समाप्त।

साधनोपयोगी पत्र

(१)

पुरुषका पाप

प्रिय महोदय! सादर हरिस्मरण। आपका पत्र मिला। आपके विचार पापपूर्ण हैं। आपको तुरंत अपनी चाल बदलनी चाहिये। निर्दोष स्त्रियोंपर होनेवाले इस प्रकारके अत्याचारोंने ही स्त्रियोंके मनोमें पुरुषोंके प्रति घृणा उत्पन्न की है। पत्नीका यह धर्म कदापि नहीं है कि वह आपके पापमें सहायता करे। शराब पीये, व्यभिचार करे और आपकी व्यभिचार-प्रवृत्तिमें सहायक हो। आपका मानो कोई धर्म ही नहीं है। याद रखिये—स्त्री पुरुषकी गुलाम नहीं है, दासी नहीं है। वह अर्धांगिनी है, सखी है। उसका भी अधिकार है। उसके भी मन है, उसकी भी अपनी इच्छाएँ हैं, उसका भी अपना गौरव है। वह पत्थरकी शिला नहीं है। सुख-दुःखका अनुभव उसे भी होता है। आपका धर्म है—उसे सुख पहुँचाना, उसे मित्र मानकर उसको अपने बराबर समझना, उसकी इच्छाको मान देना और उसको पापमें प्रवृत्त करनेकी बात तो कभी सोचना ही नहीं। स्त्री-पुरुष एक-दूसरेके पूरक हैं। आपका जो बर्ताव अपनी पत्नीके प्रति है और उसे आप पत्नीके पातिव्रत्य धर्मके नामपर न्याययुक्त सिद्ध करना चाहते हैं, यह आपकी और भी हृदयहीनता है। इससे आप बड़ा धोखा खायेंगे। उसके साथ सद्व्यवहार करके उसके हृदयका मूक आशीर्वाद लीजिये। जहाँ स्त्री दुखी होकर रोती है, वह घर नष्ट हो जाता है। और जो पुरुष हृदयहीन होकर पत्नीको दुःख देता है, उसे अगले जन्मोंमें विधवा स्त्री होकर विविध दुःख भोगने पड़ते हैं। सावधान हो जाइये। शेष भगवत्कृपा।

(२)

पापको घटाइये

प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपका पत्र

मिला। आपने ब्राह्मण-जातिमें जन्म लिया है और आप व्याकरणके तीन खण्डोंमें उत्तीर्ण और चतुर्थमें अनुत्तीर्ण हैं। फिर भी आपने यह बहुत बुरा काम किया है। किसी भी व्यक्तिकी मलिन वासनाको जगानेमें सहायता करना—सो भी अपने इन्द्रियसुखके लिये—मनुष्यकी बड़ी नीचाशयता है। उस विधवा बहनको आप सगी बहन मानकर उसकी सहायता करते, उसे इन्द्रियदमनके शुभ मार्गमें प्रेरित करते तो वह आपका धर्म था, पर आपने बड़ी भूल की। तन-मन-धनका अर्पण तो भगवान्‌के प्रति होना चाहिये। यह अर्पण नहीं, वासनाकी गुलामी है, मोहवश अपनेको पतनके गर्तमें गिराना है। घर-परिवारके लोग इस बातसे नाराज हैं और आपको समझाते हैं तथा आपके न माननेपर विरोध करते हैं, सो उनका विरोध करना उचित ही है। आपका अपनी माँ-बहन-भाई किसीसे प्रेम नहीं है, सो ठीक ही है। विषयवासनामें फँसे हुए मनुष्यमें प्रेम कहाँ रहता है। वह तो अन्धा है। आपकी पत्नी अच्छी है, उससे ढाई सालकी एक बच्ची है, पर वह पत्नी आपको पैसेभर भी पसन्द नहीं है—यह आपका दुर्भाग्य है। जो कुछ हो, अब जबकि आपने उस विधवा बहनके साथ भी विवाह कर लिया है, तब उसको निबाहना भी आपका कर्तव्य हो गया है। किसीके जीवनको बिगाड़कर उसे छोड़ देना भी पाप है, अवश्य ही अभी तो आप छोड़ भी नहीं सकते। वासनाकी बाढ़में बह जो रहे हैं। तथापि आपका यह लिखना कि 'मैं लोभ-लालचमें फँसकर इस बुराईमें फँस गया। पर अब तो वह उम्मीद भी खत्म हो रही है।' इससे यह अनुमान होता है कि आपने उस विधवासे कुछ और भी लाभ उठानेकी आशा की होगी और अब वह नहीं पूरी होती दीखती है, तब ऐसी बातें आपके मनमें आने लगी हैं। यह बड़ी नीची मनोवृत्ति है। मेरी रायमें आप अब दोनों स्त्रियोंको रखिये। दोनोंका समान

कृपानुभूति

‘को कृपाल संकर सरिस’

मेरी एवं मेरे परिवारकी भगवान् शंकरमें पूरी आस्था एवं निष्ठा है। मेरे दिनकी शुरुआत शिवको जलाभिषेकसे होती है। मेरा यह मानना है कि ईश्वरीय सत्तामें जिसे पूर्ण विश्वास हो, भला उसका कोई क्या बिगाड़ सकता है। इसी भावबोधकी एक घटना, जो मेरे साथ घटी, वह इस प्रकार है—

मैं २५ जनवरी २००१ ई० को पंजाब नेशनल बैंककी गांधीधाम (कच्छ, गुजरात) शाखासे वरिष्ठ प्रबन्धकके पदसे सेवानिवृत्त हुआ। सदैवकी भाँति हम पति-पत्नी अगले दिन २६ जनवरीको शिव-दर्शन एवं जलाभिषेकके लिये मन्दिर गये। भगवान् शंकरको अभी जलाभिषेक शुरू ही किया था कि पृथ्वीमें कम्पन होने लगा एवं गड़गड़ाहटकी तेज आवाजके साथ मन्दिर हिलने लगा। मन्दिर-परिसरमें ही एक तरफ भगवती अम्बाका मन्दिर, दूसरी तरफ रामदरबार एवं तीसरी तरफ शिव-परिवार विराजित था। मैंने धर्मपत्नीको बाहर लानेके लिये उनका हाथ पकड़ा, परन्तु भूकम्पकी तीव्रताकी वजहसे हाथ छूट गया। भूकम्पने विकराल रूप ले लिया था। मैं यह सोचते हुए कि पत्नी मेरे पीछे-पीछे आ रही है, तेज दौड़कर मन्दिरसे बाहर निकला। आश्चर्य, मेरे बाहर निकलते ही मन्दिरका प्रमुख गुम्बद, जिसके नीचे मैं अभी-अभी खड़ा था, जमीनपर आ गिरा। पूरा मन्दिर खण्डहरमें बदल चुका था। मन्दिरसे बाहर निकलनेके सारे रास्ते उस मलबेने बन्द कर दिये। उस समय मन्दिरमें हम दो ही थे। मन्दिरके बाहर चारों तरफ हाहाकार और 'बचाओ-बचाओ' का करुण क्रन्दन सुनायी दे रहा था। अनेक बहुमंजिली इमारतें मेरी आँखोंके सामने धूल-धूसरित होती दिखायी दे रही थीं। एक ही पलमें हँसी चीत्कारोंमें बदल चुकी थी। यमराजरूपी उस प्रलंयकारी भूकम्पने कुछ ही क्षणोंमें हजारों जानें लील ली थीं। विनाशके बाद ही उस प्रलंयकारी भूकम्परूपी दानवकी भयंकर शक्ति हुई थी।

मन्दिरका मलबा मेरे सामने पड़ा था। मेरी चिन्ता बढ़ गयी कि पत्नीका क्या हुआ? मैं मन-ही-मन ईश्वरीय सत्ताको याद कर रहा था। 'ॐ नमः शिवाय' का जप अनवरत चल रहा था। आँखोंमें आँसू थे। बार-बार आवाजें लगानेपर भी कोई जवाब नहीं मिल रहा था। मेरा जप अनवरत चल रहा था। उसी समय हर्ष और आश्चर्यमिश्रित घटना घटी, करीब पन्द्रह मिनट के अन्तरालके बाद पत्नीको मन्दिरके पिछवाड़ेसे आते देखा। आँखोंपर सहसा विश्वास नहीं हुआ। उसके मुँहसे शब्द नहीं निकल रहे थे। उसके चेहरेपर भय और विषादकी लकीरें साफ दिखायी दे रही थीं। आँखें आँसुओंसे आप्लावित थीं। कुछ शान्त होनेके बाद उसने बताया कि मेरा हाथ छूटनेके बाद वह शिवलिंगका सहारा लेकर बैठ गयी और प्राणरक्षाहेतु भगवान् शंकरसे आर्तनाद करने लगी। पूरा मन्दिर जो एक विशाल चबूतरेपर ८-१० फुटकी ऊँचाईपर स्थित था, मलबा बन चुका था। भगवान् आशुतोषकी कृपासे शिव-परिवारका मन्दिर इस तरह टूटा कि पत्नीकी देहपर एक खरोंचतक नहीं आयी एवं ८-१० फुट नीचे कदकर उसने अपनी जान बचायी।

ईश्वरीय अनुकम्पा देखिये कि अगर मैं बाहर निकलनेमें कुछ क्षणोंकी भी देरी करता तो उस विशाल गुम्बदकी चपेटमें आकर मृत्युको वरण कर चुका होता और यदि मेरी पत्नी मेरे पीछे-पीछे आती तो गुम्बदकी चपेटमें आकर उसकी मृत्यु निश्चित थी। भगवान् शंकरको कोटि-कोटि नमन, जिन्होंने इस प्रलंयकारी भूकम्पसे हम दोनोंके जीवनकी रक्षा की। भगवान् शंकरके समान भला कौन कृपालु हो सकता है। इस घटनासे मेरे निम्नलिखित मतको और अधिक पष्टि मिली—

जरत सकल सरबंद बिषम गरल जेहिं पान किय।

तेहि न भजसि मन मंद को कृपाल संकर सरिस ॥

पढ़ो, समझो और करो

(१)

सकारात्मक सोच

रामधनको कौन नहीं जानता। रिक्शा चलाते हुए बीस बरस हो गये। शहरका बच्चा-बच्चा रामधनको सर-आँखोंपर बिठाता है। वह बच्चोंका प्यारा-दुलारा जो है। यदि कोई बच्चा बीमार हो गया हो, स्कूलकी बस छूट गयी हो, कभी बच्चोंमें परस्पर झगड़ा हो गया हो, घरमें अकेला रह गया हो, बच्चेको अस्पताल ले जाना हो, बस्तेका वजन ज्यादा हो तो रामधनको बुला लो। वह सदैव तैयार मिलेगा। बशर्ते कि वह किसी सवारीको कहीं ले नहीं जा रहा हो। यदि आपको उसे बुलाना है तो आपके पास उसके फोन नम्बर जरूर होंगे। यदि न भी हो तो चिन्ताकी कोई बात नहीं। राह चलते किसी भी आदमीसे, किसी मजदूरसे, दुकानदारसे, नौकरी पेशावालेसे या ठेलावाले—किसीसे भी उसका नम्बर पूछ लो, बता देगा। आदमी कामवाला है ना। बुलानेपर तत्काल पहुँच जाता है रिक्शा लेकर आपके पास। यदि आपको रेलवे स्टेशनपर जानेकी जल्दी हो, बस पकड़नी हो, बैंकमें जानेको साधन नहीं हो तो रामधनकी सेवाएँ प्रस्तुत हैं।

उस दिन सोनी अस्पतालमें एक महिला रोगीको खूनकी जरूरत थी। मुझे खून देना था। जानेका साधन रातके ग्यारह बजे भला कैसे सम्भव है। तत्काल रामधनको फोन किया तो उत्तर मिला, 'बाबूजी! रोडवेजवाले चौराहेपर हूँ। अभी आया, जल्दी हो तो आप चौराहेकी ओर आइये और मैं इधरसे प्रस्थान कर रहा हूँ। आप निश्चिन्त रहिये, दस मिनट भी नहीं लगेंगे अस्पताल पहुँचनेमें।'

देखते-ही-देखते रामधनका रिक्शा आँख झपकते ही सामने आ खड़ा हुआ और चल दिया अस्पतालकी ओर। रामधन सभी आवश्यक स्थानोंका पूरा रास्ता जानता है। खुशमिजाज रामधन पूछने लगा।

'बाबूजी! घरपर सब ठीक-ठाक तो है ना! इस

भाग-दौड़की जिन्दगीमें किसीको बात करनेकी भी फुरसत नहीं मिलती। मैं तो रोज देखता हूँ, रास्ते सुनसान नहीं रहते। भीड़भरे रास्तोंमें कई बार वाहनोंकी रेलमपेलमें दुर्घटनाका खतरा बना रहता है। यह तो बरसों रिक्शा चलाते-चलाते मेरा हाथ साफ हो गया है, नहीं तो रोज ही एक्सीडेंटका खतरा बना रहता है।' बातचीत चल ही रही थी कि सामनेसे एक टैक्सीवाला तेज गतिसे गलत साइडसे आ रहा था। उसकी टैक्सीका पिछला भाग मेरे रिक्शेसे टकराते-टकराते बचा। टैक्सीवाला रुका तब रामधनने कहा, 'भैया! गलत साइड मत चला करो', किन्तु वह नौजवान अपनी गलती नहीं मानते हुए कहने लगा—'तुम्हें दिखाई नहीं दे रहा था कि मैं सामनेसे आ रहा हूँ। बेवकूफ कहींके। रिक्शा चलाना नहीं आता तो क्यों चलाते हो', और क्रोधित होकर गालियोंकी बरसात करने लगा। रामधन कुछ नहीं बोला, मुसकराता रहा, कहने लगा—'भैयाजी! गलती हो गयी। माफ करना। मैं आपसे क्षमा चाहता हूँ।'

'चोरी और सीना जोरी' वाली कहावतको चरितार्थ होते देखकर मैंने रामधनसे कहा—'भैया! गलती उसकी थी, गलत साइडसे वह आ रहा था और सटकर निकलना क्या उसकी गलती नहीं थी। तुम तो रामधन बहुत सीधे हो। उसकी गालियाँ सुनते रहे और क्षमा माँगते रहे। ऐसा क्यों? ईटका जवाब पत्थरसे देना चाहिये था।'

'बाबूजी! दुनियामें बहुतसे लोग स्वच्छ भारत मिशनके कूड़ा-कचरेसे भरे ट्रककी तरह होते हैं। वे लोग बहुत सारा कूड़ा अपने दिमागमें भरकर चलते हैं। जिन चीजोंकी जीवनमें आवश्यकता ही नहीं होती, उन्हें भी वे ढोते रहते हैं, जैसे क्रोध, घृणा, ईर्ष्या, द्वेष, तनाव, निराशा, चिन्ता, अहंकार आदि उनके दिमागमें कूड़ेकी तरह भरा रहता है और जब यह कूड़ा अधिक हो जाता है, तो वे अपना बोझ कम करनेके लिये दूसरोंपर

फेंकनेका अवसर ढूँढ़ते रहते हैं, इसलिये मैं ऐसे लोगोंसे दूरी बनाये रखता हूँ; क्योंकि उनके द्वारा गिराया गया कूड़ा मैंने स्वीकार कर लिया तो मैं भी स्वच्छता मिशनवाला कूड़ेका ट्रक बन जाऊँगा। स्वच्छ भारत मिशनकी तरह मानसिक सफाई अभियान आवश्यक है, ताकि लोगोंके मन-मस्तिष्कसे कूड़ा हट सके और अपने पास-पड़ोसके लोगोंपर वह कूड़ा गिरता न रहे। मेरी सोच है कि यह जिन्दगी बड़ी खूबसूरत है, अतः जो हमसे अच्छा व्यवहार करते हैं, उन्हें धन्यवाद कहो और जो अच्छा व्यवहार नहीं करते, उन्हें मुसकराकर माफ कर दो। बाबू साहब! सभी रोगी अस्पतालमें नहीं होते, कुछ मानसिक रोगी हमारे इर्द-गिर्द खुलेमें घूमते रहते हैं। आप जानते हैं यदि खेतमें बीज नहीं डाला जाय तो प्रकृति उसे घास-फूससे भर देती है। इसी तरह यदि मस्तिष्कमें सकारात्मक विचार नहीं भरे जायँ तो नकारात्मक विचार उनकी जगह बना लेंगे। यह सही है कि जिसके पास जो होता है, वही तो बाँटता है। ज्ञानी ज्ञान बाँटता है और भ्रमित भ्रम बाँटता है।

इसीलिये मैं सकारात्मक सोचके साथ गलती सामनेवालेकी होनेपर भी मुसकराकर क्षमा माँगनेमें अपना हित समझता हूँ।

रामधनकी यह सकारात्मक सोच मुझे जीवनकी बहुत बड़ी सीख दे गयी, जो हर मानवके लिये हितकर है ।—शंकरलाल माहेश्वरी

(२)

ईमानदारी आज भी जिन्दा है

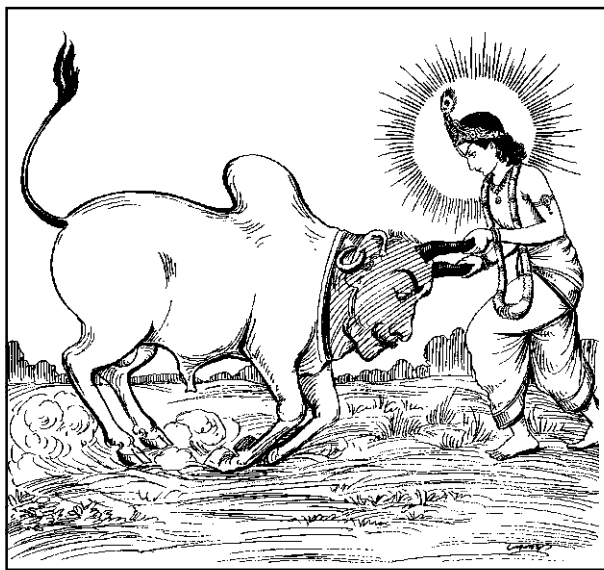
घटना सन् १९८९ ई०के अक्टूबर माहकी है। मैं जिला गुना-म० प्र० का निवासी हूँ। मेरे पिताजीका इलाज चल रहा था। उनकी तबियत चार माहसे खराब थी। मैं अपने वर्तमान मकान अशोकनगरमें रहकर उनका इलाज करा रहा था। शारदीय नवरात्रका समय था। पिताजी कहने लगे कि 'अब घर चलो। खेतीका समय आ गया।' उस समय सड़कें थीं नहीं, पैदल चलना पड़ता था, अथवा ऊँट-घोड़ेकी

सवारी मिलती थी। अशोकनगरसे ४०कि०मी० तकका पैदल रास्ता पार करके घर पहुँचना होता था। बारिश समाप्त होनेके पश्चात् ही कच्चे रास्तोंपर अपनी सवारी ट्रैक्टर, बैलगाड़ी आदि चल पाती थी। पिताजीके कहनेपर मैं अशोकनगरसे अपने गाँवतक पैदल चलकर घर पहुँचा। वहाँसे खेतीके लिये डीजल लेनेके लिये चला एवं २०० लीटरका ड्रम ट्रैक्टरपर बाँधकर हम पिताजीको लेने अशोकनगर अपने मकानपर पहुँचे। रात्रि विश्राम किया, सारे दिन अशोकनगरमें खेतीके लिये डीजल, और घरके लिये किशानेका सामान खरीदा, फिर शाम हो गयी तो अशोकनगरमें ही रात्रिविश्राम करके सुबह सब सामान बाँधकर ट्रैक्टरपर रखकर घरको चले। मेरे साथ पिताजी, मेरी धर्मपत्नी, दोनों बच्चे, ड्राइवर और एक हेल्पर था। रास्तेमें मुझे ठण्ड देकर मलेरिया बुखार हो आया। मुझे बेचैनी-सी हो गयी। मेरे हाथमें एक बैग था, जिसमें मेरी धर्मपत्नीकी करीबन दो-ढाई तोलेकी सोनेकी चैन, दो अँगूठी, पाँवकी पायजेब दो जोड़, एक सोनेकी गोल, मकानकी रजिस्ट्रीके कागजात, मेरे परिवारके फोटोका एलबम, बारह बोर बन्दूकका लायसेन्सका कागज, पिताजीके नामका ३१५ बोरका लायसेन्सका कागज रखा था। उसी बैगमें मेरा पर्स भी था, उसमें कुछ पैसे भी थे। मेरा छोटा भाई जो मुझसे लगभग दस साल छोटा है, वह भी साथ था। वह अशोकनगरमें रहकर कक्षा ९ की पढ़ाई कर रहा था। उसी बैगमें उसका स्कूलका परिचय-पत्र था, जो बैगके साथ ट्रैक्टरसे कहीं टपककर गिर गया। जब घर आकर हमने सामान ट्रैक्टरसे उतारकर घरपर रखा तो वह बैग कहीं नजर नहीं आया। मैंने अपनी पत्नीसे पूछा तो उसने कहा, आपके ही पास था। अब तो सब सकते में आ गये। इतना सामान, जरूरी कागजात, अब क्या हो? कैसे पता चले? पर कुछ दिन बाद ही भैंसरवास तहसील अशोकनगरका जो वर्तमानमें आज जिला है, वहाँका एक आदमी हाथमें बाबू

मनन करने योग्य

गुरुकी अवहेलनाका दुष्परिणाम

एक दिन भगवान् श्रीकृष्ण गोपबालकोंके साथ वनमें गोचारण कर रहे थे। सहसा गोपबालकोंके बीचमें कंसद्वारा प्रेषित महाबली दैत्य अरिष्टासुर आया। उसकी आकृति पर्वताकार साँड़-जैसी थी। वह अपने सिंहनादसे पृथ्वी और आकाशको गुँजा रहा था और सींगोंसे पर्वतीय तटोंको विदीर्ण कर रहा था। उसे देखते ही गोपियाँ, गोप तथा गौओंके समुदाय भयसे इधर-उधर भागने लगे। दैत्योंके नाशक भगवान्



श्रीकृष्णने उन सबको अभय देते हुए कहा—‘डरो मत।’ माधवने उसके सींग पकड़ लिये और उसे पीछे ढकेल दिया। उस राक्षसने भी श्रीकृष्णको ढकेलकर दो योजन पीछे कर दिया। तब श्रीकृष्णने उसकी पूँछ पकड़ ली और बाहुवेगसे घुमाते हुए उसे उसी प्रकार पृथ्वीपर पटक दिया, जैसे छोटा बालक कमण्डलुको फेंक दे। अरिष्ट फिर उठा। क्रोधसे उसके नेत्र लाल हो रहे थे। उस महादुष्ट वीरने सींगोंसे लाल पत्थर उखाड़कर मेघकी भाँति गर्जना करते हुए श्रीकृष्णके ऊपर फेंका। श्रीकृष्णने उस प्रस्तरको पकड़कर उलटे

उसीपर दे मारा। उस शिलाखण्डके प्रहारसे वह मन-ही-मन कुछ व्याकुल हो उठा। उसने अपने सींगोंके अग्रभागसे पृथ्वीपर प्रहार करना आरम्भ किया, इससे पृथ्वीके भीतरसे पानी निकल आया। तब श्रीकृष्णने उसके सींग पकड़कर बार-बार घुमाते हुए उसे पृथ्वीपर उसी प्रकार दे मारा, जैसे हवा कमलको उठाकर फेंक देती है, जिससे उसके प्राण-पखेरू उड़ गये। उसी समय वह वृषभका रूप त्यागकर ब्राह्मणशरीरधारी हो गया और श्रीकृष्णके चरणारविन्दोंमें प्रणाम करके भक्तिसे गद्गद वाणीमें बोला—हे भगवन्! मैं बृहस्पतिका शिष्य द्विजश्रेष्ठ वरतन्तु हूँ। मैं बृहस्पतिजीके समीप पढ़ने गया था। उस समय उनकी ओर पाँव फैलाकर उनके सामने बैठ गया था। इससे वे मुनि रोषपूर्वक बोले—‘तू मेरे आगे बैलकी भाँति बैठा है, इससे गुरुकी अवहेलना हुई है; अतः दुर्बुद्धे! तू बैल हो जा।’ माधव! उस शापसे मैं वंगदेशमें बैल हो गया। असुरोंके संगमें रहनेसे मुझमें असुरभाव आ गया था। अब आपके प्रसादसे मैं शाप और असुरभावसे मुक्त हो गया। आप श्रीकृष्णको नमस्कार है। आप भगवान् वासुदेवको प्रणाम है। प्रणतजनोंके क्लेशका नाश करनेवाले आप गोविन्ददेवको बारंबार नमस्कार है।

यों कहकर श्रीहरिको नमस्कार करके बृहस्पतिके साक्षात् शिष्य वरतन्तु भुवनको प्रकाशित करते हुए विमानसे दिव्यलोकको चले गये।

इस प्रकार इस पौराणिक घटनासे यह बोध होता है कि अपने गुरुजनोंके प्रति व्यक्तिको आदरका भाव रखना चाहिये तथा उनके प्रति शिष्ट व्यवहार करना चाहिये, अन्यथा इसके दुःखद परिणाम होते हैं।

[गर्गसंहिता]

Saintly Readers,

This year **Kalyana-Kalpataru** proposes to publish **Upāsana** Special Issue in **October 2020** as its **Annual Number**.

Upāsana literally means to make the mind sit close to God. There are mainly two practical ways when state of mind evolves, the idea of God penetrates every pore of the body, either through the discipline of devotion that the devotee feels oneness with God through intense devotion or through the discipline of Knowledge, discarding the identification with the body, the self merges in God Himself. So either way our lives get sublimated. I hope this issue will benefit all of us.

Therefore, I solicit you to send us writes-up before **30th, June 2020**. The writes-up should be concise and lucid in typed forms. Topics are suggested below or any related matters.

Upāsana Number

1. Stages of Upāsana 2. What is the meaning of Upāsana? 3. Rightful person for Upāsana 4. The Mantras of Upāsana 5. Upāsana for betterment of beings 6. Devotional Spirit 7. Vaidika mystery of Upāsana 8. Essence of Upāsana 9. Psychological teaching of Upāsana 10. Upāsana according to scriptures 11. Upāsana to attain God-realization 12. Mystery of syllable 13. Upāsana in Upanishads 14. Different kind of Upāsana—(a) Gāyatrī Upāsana (b) Gītā Upāsana (c) Devopāsana (d) Sūryopāsana (e) Śrī Rāma Upāsana (f) Hanumat Upāsana (g) Śrī Kṛṣṇa Upāsana (h) Śakti Upāsana (i) Śivopāsana (j) Jyotiṣopāsana (k) Navagraha Upāsana (l) Saguṇa and Nirguṇa Upāsana (m) Mantra Upāsana (n) Viṣṇu Upāsana (o) Gaṇeśa Upāsana (p) Sarasvatī Upāsana (q) Lakṣmī Upāsana (r) Pañcadevopāsana 15. Upāsana of Śabarī 16. Use of Magical formulae in Upāsana 17. Impact of prescribed flowers used in Upāsana 18. Foremost Upāsana—Nāmopāsana 19. Annihilation of various impediments by true Upāsana 20. Worship of worshipped 21. Upāsana in Vaiṣṇava Sect 22. All-round effect of Upāsana 23. Upāsana in Nimbārka Sect 24. Awakefulness of Ātmā through Upāsana 25. Upāsana by all limbs 26. Upāsana in Śākta Sect 27. Why effect of Upāsana or Sādhana not visioned immediately? 28. Different Upāsana—a comparative viewpoints 29. Upāsana of Uddhava, Gopikās, Sūradāsa, Mīrābāī, and Tulasīdāsa 30. Upāsana in Rāmacaritamānasa 31. Upāsana in different religions—(a) Jain (b) Bauddha (c) Islam (d) Christianity (e) Zoroastrian 32. Kinds of Upāsana 33. Characteristics of Upāsana 34. Obstacles in Upāsana

—Editor

Send articles at the following address—

Editor—Kalyana-Kalpataru, P. O. Gita Press, Gorakhpur—273005 (U. P.)

‘कल्याण’ नामक हिन्दी मासिक पत्रके सम्बन्धमें विवरण

१-प्रकाशनका स्थान—गीताप्रेस, गोरखपुर, २-प्रकाशनकी आवृत्ति—मासिक

३-मुद्रक एवं प्रकाशकका नाम—केशोराम अग्रवाल, (गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये), राष्ट्रगत सम्बन्ध—भारतीय, पता—गीताप्रेस, गोरखपुर

४-सम्पादकका नाम—राधेश्याम खेमका, राष्ट्रगत सम्बन्ध—भारतीय, पता—गीताप्रेस, गोरखपुर

५-उन व्यक्तियोंके नाम-पते जो इस पत्रिकाके मालिक हैं और जो इसकी पूँजीके भागीदार हैं:—गोबिन्दभवन-कार्यालय, १५१, महात्मा गाँधी रोड, कोलकाता (पश्चिम बंगाल सोसाइटी पंजीयन अधिनियम १९६१ के अन्तर्गत पंजीकृत)।

मैं केशोराम अग्रवाल गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये इसके द्वारा यह घोषित करता हूँ कि ऊपर लिखी बातें मेरी जानकारी और विश्वासके अनुसार यथार्थ हैं।

केशोराम अग्रवाल (गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये)—प्रकाशक



COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with



By

Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!



KAPWING

LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT

LICENCE No. WPP/GR-03/2020-2022

गीताभवन, स्वर्गाश्रमके सत्संगकी सूचना



गीताभवन, स्वर्गाश्रम ऋषिकेशमें ग्रीष्मकालमें सत्संगका लाभ श्रद्धालु एवं आत्मकल्याण चाहनेवाले साधकोंको प्रारम्भसे ही प्राप्त होता रहा है। **पूर्वकी भाँति इस वर्ष भी चैत्र शुक्ल द्वादशी (५ अप्रैल)-से सत्संगका विशेष आयोजन प्रारम्भ किया जायगा, जो लगभग तीन मासतक चलेगा।** इस अवसरपर संत-महात्मा एवं विद्वद्गणोंके पधारनेकी बात है। **गीताभवनमें चैत्र एवं आश्विन नवरात्रमें श्रीरामचरितमानसका सामूहिक नवाह्न-पाठका**

कार्यक्रम रहता है। गीताभवनमें आयोजित दुर्लभ सत्संगका लाभ श्रद्धालु और कल्याणकामी साधकोंको अवश्य उठाना चाहिये।

पूर्वकी भाँति इस वर्ष भी द्विजातियोंका सामूहिक यज्ञोपवीत-संस्कार दिनांक २७ मई (ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी)-को होना निश्चित हुआ है, जिसकी पूजा २६ मईको प्रारम्भ हो जायगी। इच्छुक जनोंको २५ मईतक गीताभवन पहुँच जाना चाहिये।

गीताभवनमें संयमित साधक-जीवन व्यतीत करते हुए सत्संग-कार्यक्रमोंमें सम्मिलित होना अनिवार्य है। यहाँ आवास, भोजन, राशन-सामग्री आदिकी यथासाध्य व्यवस्था रहती है।

महिलाओंको अकेले नहीं आना चाहिये, उन्हें किसी निकट सम्बन्धीके साथ ही यहाँ आना चाहिये। गहने आदि जोखिमकी वस्तुओंको, जहाँतक सम्भव हो, नहीं लाना चाहिये।

सत्संगमें आनेवाले साधकोंको **आधार कार्ड** अथवा फोटोयुक्त अन्य **पहचान-पत्र** रखना आवश्यक है।

व्यवस्थापक—गीताभवन, पो०-स्वर्गाश्रम—२४९३०४

श्रीराधा-माधव अङ्क अब ग्रन्थरूपमें उपलब्ध

सुहृद् पाठकों—श्रद्धालु भक्तोंको श्रीराधा-माधवकी मधुरातिमधुर लीलाओंका दर्शन कराने-हेतु जनवरी 2019 के विशेषांक रूपमें श्रीराधा-माधव अङ्कका प्रकाशन किया गया था, इसमें मुख्य रूपसे श्रीराधा-माधवकी उपासनाके विविधरूप, श्यामसुन्दर एवं राधारानीकी अन्तरंग तथा बाह्यलीलाओंके सहचर, भक्तवृन्दोंकी रोचक कथाओंकी प्राथमिकता है जो साधकों तथा आस्तिकजनोंके लिये परम मंगलमय एवं हितकारी है। **अब यह विशेषांक बिना मासिक अंकोंके अलगसे ग्रन्थरूपमें उपलब्ध है।** (कोड 2235) मूल्य ₹ १४०। आप स्वयं मँगवाना चाहते हों अथवा किसी आत्मीयजनको रजिस्ट्रीसे भेजना चाहते हों तो डाकखर्च ₹ ५० नहीं लगेगा।

श्रीमद्भागवतकथा आदि शुभ अवसरोंपर प्रसादरूप वितरित करनेवालोंके लिये विशेष छूट उपलब्ध है। विशेष छूट पानेके लिये मो०नं० 8545857113, 7985282936, 998488988 पर सम्पर्क करना चाहिये।

☛ **booksales@gitapress.org**
थोक पुस्तकोंसे सम्बन्धित सन्देश भेजें।
☛ **gitapress.org**
सूची-पत्र एवं पुस्तकोंका विवरण पढ़ें।

कूरियर/डाकसे मँगवानेके लिये
गीताप्रेस, गोरखपुर, 273005
book.gitapress.org
gitapressbookshop.in